ISBN-978-93-341-2507-8

आचार्य प्रशांत जी का शैक्षिक योगदान



- राजीव अग्रवाल
- गुलाब चन्द्र
- लकी वर्मा

आचार्य प्रशांत जी का शैक्षिक योगदान

डॉ॰ राजीव अग्रवाल

एसोसिएट प्रोफेसर

अतर्रा पोस्ट ग्रेजुएट कॉलेज,अतर्रा

(बाँदा)

गुलाब चन्द्र

M.Sc.(Chemistry), M.Ed

लकी वर्मा

B.A.(Hindi, Social Science),B.Ed.

आचार्य प्रशांत जी का शैक्षिक योगदान

डॉ० राजीव अग्रवाल

गुलाब चन्द्र

लकी वर्मा

E-book संस्करण: 2024

मूल्य : ₹49

ISBN: **978-93-341-2507-8**

प्रकाशक-

लकी वर्मा

क्योटरा,बाँदा

जिला-बाँदा (उत्तर प्रदेश)

पिन कोड – 210001

मो. – 6388363406

ई-मेल:luckybanda835@gmail.com

प्राक्कथन

किसी भी राष्ट्र अथवा समाज के विकास का सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन मानव है। कोई भी राष्ट्रतब ही उन्नति कर सकता है. जब उस राष्ट्र के सभी नागरिकों को विकास के सर्वोत्तम अवसर मिलें तथा वे उन अवसरों का लाभ उठाने के लिए समर्थ हो। मानव को पृथ्वी का सबसे विलक्षण, विचारशील तथा सक्रिय प्राणी माना जाता है। अपनी मानसिक क्षमता, चिन्तन प्रक्रिया तथा सृजनात्मक शक्ति के आधार पर मानव ने न केवल ब्रह्माण्ड की परिधि को लाँघा है वरन् अपनी सभ्यता तथा संस्कृति का विकास करते हुए आनन्द दायक जीवन व्यतीत करने की दिशा में अग्रसर हुआ है, परन्तु मानव जाति के विकास का आधार शिक्षा प्रणाली ही है।

शिक्षा मानव विकास की वह प्रक्रिया है, जो व्यक्ति का सर्वांगीण विकास कर उसे सफलता के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचाती है। शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है, जो जन्म से शुरू होकर मृत्यु तक चलती रहती है। मनुष्य सदैव कुछ-न-कुछ सीखता रहता है। शिक्षा व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक, चारित्रिक, संवेगात्मक तथा आध्यात्मिक शक्तियों का विकास कर इस योग्य बनाती है कि वह संसार में अपनी एक अलग पहचान बनाता है। वास्तव में शिक्षा ज्ञान के प्रचार-प्रसार का एक माध्यम है और इसका उद्देश्य एक पौड़ी से दूसरी पीढ़ी तक जीवन के सभी मूल्यों को पहुँचाने तथा भावी पीढ़ी को आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिए तैयार करना है।

प्राचीन काल में शिक्षा धार्मिक, संस्कृति एवं नैतिकता से परिपूर्ण थी। जैसे जैसे हम आधुनिकता और विज्ञान युग कि ओर बढ़ते गए शिक्षा प्रणाली से धर्म संरकृति का लोप होता गया। विज्ञान युग तक आते आते शिक्षा के क्षेत्र में कई बदलाव आए शिक्षा का व्यवसायीकरण, राजनीतिकरण हुआ। परंतु जब तक शिक्षा जीवन के मूल्यों आदर्शों एवं मान्यताओं का परिचय नहीं देती तब तक वह शिक्षा नहीं कही जा सकती। आचार्य प्रशान्त जी शिक्षा प्रणाली में धर्म, संस्कृति एवं नैतिकता के समावेश हेतु कटिबद्द हैं।

प्रस्तुत पुस्तक का शीर्षक है, **'आचार्य प्रशांत जी का शैक्षिक योगदान'** इस पुस्तक को छः अध्यायों में विभाजित किया गया है-

प्रथम अध्याय- इस अध्याय में आचार्य प्रशांत जी का परिचय है । जिसके अन्तर्गत समस्या का प्रादुर्भाव, वर्तमान शिक्षा प्रणाली की समस्याएँ, अध्ययन के उद्देश्य, शोध विधि, अध्ययन का महत्व एवं सार्थकता पर प्रकाश डाला गया है।

द्वितीय अध्याय- इस अध्याय में अध्ययन से सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण किया गया है, जिसके अन्तर्गत शैक्षिक विचार धारा से सम्बन्धित कतिपय शोध अध्ययन की समीक्षा एवं निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय- इस अध्याय में आचार्य प्रशांत जी का जीवन परिचय का वर्णन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय- इस अध्याय में आचार्य प्रशान्त जी की साहित्य सर्जना का उल्लेख किया गया है।

पंचम अध्याय- इस अध्याय में आचार्य प्रशान्त जी के शैक्षिक विचार धारा का वर्णन किया गया है।

षष्ठ अध्याय- इस अध्याय में शोध के निष्कर्ष, शैक्षिक उपादेयता, अध्ययन के सुझाव एवं भावी शोध हेतु सुझाव प्रस्तुत किए गए है।

प्रस्तुत पुस्तक लघु शोध-प्रबन्ध पर आधारित है। प्रत्येक शोध कार्य सोद्देश्य होता है और शोध कार्य के परिणामों के उचित क्रियान्वयन पर ही यह उद्देश्य सार्थक हो सकता है। इस कार्य के लिए शोध कार्य को जनमानस के लिए सुलभ बनाने की नितांत आवश्यकता होती है। एक पुस्तक के रूप में शोध कार्य को प्रकाशित करने से यह कार्य सुगमता से पूर्ण हो सकता है। शोध कार्य के पुस्तक के रूप में प्रकाशन से वैज्ञानिक ज्ञान में वृद्धि होती है तथा अन्य बुद्धिजीवियों को अनेक क्षेत्रों में नवीन अनुसंधान करने की प्रेरणा भी प्राप्त होती है। प्रस्तुत पुस्तक इसी दिशा में किया गया एक प्रयास है। यह पुस्तक निश्चित ही जनमानस में '**आचार्य प्रशांत जी**' की शैक्षिक उपादेयता पर प्रकाश डालने में सहायक सिद्ध होगी।
इस पुस्तक के सृजन में सन्दर्भ ग्रन्थ सूची में उल्लिखित विभिन्न पुस्तकों का सहयोग लिया गया है. हम उन सभी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हैं।
प्रस्तुत पुस्तक में अनेक त्रुटियाँ होना स्वाभाविक है। अतएव यदि अनुभावी विद्वतगण अवगत कराने का कष्ट करेंगे तो, हम अत्यंत आभारी रहेंगे और आगामी संस्करणों में उन त्रुटियों को दूर कर सकेंगे ।

डॉ.राजीव अग्रवाल

गुलाब चन्द्र

लकी वर्मा

अनुक्रमणिका

अध्याय	विषय वस्तु	पृष्ठ संख्या

प्रथम अध्याय

अध्ययन परिचय

- ❖शिक्षा: विकास की प्रक्रिया
- ❖वर्तमान शिक्षा प्रणाली
- ❖शिक्षा में विभिन्न समाज सुधारकों का योगदान
- ❖समस्या का प्रादुर्भाव
- ❖अध्ययन की आवश्यकता
- ❖समस्या कथन
- ❖अध्ययन के उद्देश्य
- ❖सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन
- ❖अध्ययन विधि
- ❖शोध अध्ययन के स्रोत
- ❖अध्ययन का परिसीमांकन
- ❖अध्ययन का महत्त्व एवं सार्थकता

प्रथम अध्याय

अध्ययन परिचय

1.1 शिक्षा: विकास की प्रक्रिया

बालकों में कुछ जन्मजात शक्तियां रहती हैं। बालक इन्हीं जन्मजात शक्तियों के आधार पर व्यवहार करता है। शिक्षा बालक को सुसंस्कृत बनाने का माध्यम है। यह हमारी संवेदनशीलता और दृष्टि को प्रखर करती है। जिससे राष्ट्रीय एकता पनपती है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य अपनी शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं आध्यात्मिक शक्ति को अनुशासित करता है। इस प्रकार मनुष्य के अनुशासन के विकास में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। शिक्षा के आधार पर ही अनुसंधान और विकास को संबल मिलता है, जो राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता की आधारशिला है। शिक्षा समाज के भूत, वर्तमान और भविष्य तीनों से संबंधित होती है। शिक्षा वर्तमान तथा भविष्य के निर्माण का अनुपम साधन है। शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है, शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास संभव हो पाता है।

शिक्षा किसी राष्ट्र के नवनिर्माण एवं उनकी संस्कृति की वाहक होती है। शिक्षा के गौरवशाली अतीत पर ही उसके वर्तमान की दिशा निर्धारित होती है। शिक्षा एक उद्देश्य पूर्ण सामाजिक प्रक्रिया है। जिसके माध्यम से व्यक्ति के व्यवहार कार्यप्रणाली एवं जीवन व्रत में परिवर्तन एवं परिमार्जन किया जाता है। शिक्षा न केवल पथ प्रदर्शक, ज्ञानवर्धक एवं प्रगति की द्योतक होती है बल्कि यह हमारी राष्ट्रीय गरिमा को संरक्षित एवं संवर्धित करती है। शिक्षा के द्वारा ही मनुष्य की अंतर्निहित शक्तियों का विकास करके उसके व्यवहार का परिमार्जन एवं परिष्करण किया जाता है।

शिक्षा को केवल ज्ञान देने का साधन नहीं माना जा रहा परंतु जब तक शिक्षा जीवन के मूल्यों, आदर्शों एवं परंपराओं, मान्यताओं का परिचय न दें, तब तक वह शिक्षा नहीं कही जा सकती। आज भारत में फैली बुराइयों, सामाजिक कुरीतियों के कारण नैतिकता का ह्रास होता जा रहा है। इन समस्याओं को हल करने के लिए समाज को शिक्षित होना होगा और इसके लिए शिक्षा व्यवस्था में बदलाव लाना होगा।

भारत एक ऐसा देश है, जो धर्म एवं अध्यात्म के क्षेत्र में विश्व का मार्गदर्शक रहा है। हमारी प्राचीन सभ्यता और संस्कृति एवं आदर्शों, परंपराओं का ही प्रभाव था कि संपूर्ण विश्व में हमारी सभ्यता एवं संस्कृति का प्रसार हुआ। समाज के उत्थान एवं उन्नति के लिए प्राचीन काल से ही धर्मगुरु, समाज सुधारकों के प्रयास सराहनीय रहे हैं। समय-समय पर विभिन्न संस्थाओं ने समाज में शिक्षा के व्यापक प्रसार के लिए योगदान दिया है। जैसे समाज में स्त्री शिक्षा, बालकों की शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा आदि। इसी क्रम में आचार्य प्रशान्त जी सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं वास्तविक अध्यात्म की स्थापना हेतु सक्रिय कार्य कर रहे हैं। तथा आचार्य जी अपनी संस्था "प्रशान्त अद्वैत फाउंडेशन" के माध्यम से लोगों को समाज की मुख्य धारा में लाने का प्रयाश कर रहे हैं। जो अपनी नवनीत वृत्ति से समाज का मार्ग दर्शन करते हैं और आध्यात्मिक उन्नति का पथ प्रशस्त करते हैं।

1.2 वर्तमान शिक्षा प्रणाली की समस्याएं

किसी भी राष्ट्र अथवा समाज में शिक्षा सामाजिक नियंत्रण, व्यक्तित्व निर्माण तथा सामाजिक व आर्थिक प्रगति का मापदंड होती है। भारत की वर्तमान शिक्षा प्रणाली ब्रिटिश प्रतिरूप पर आधारित है जिसे सन् 1835 ई. में लागू किया गया।

सन् 1835 ई. में जब वर्तमान शिक्षा प्रणाली की नींव रखी गई थी तब लॉर्ड मैकाले ने स्पष्ट शब्दों में कहा था कि अंग्रेजी शिक्षा का उद्देश्य भारत में प्रशासन के लिए विचौलियों की भूमिका निभाने तथा सरकारी कार्य के लिए भारत के विशिष्ट लोगों

को तैयार करना है। इसके फलस्वरूप एक सदी तक शिक्षा के प्रयोग में लाने के बाद भी 1935 ई. में भारत की साक्षरता दस प्रतिशत के आँकड़े को भी पार नहीं कर पाई स्वतंत्रता प्राप्ति के समय भारत की साक्षरता मात्र 13 प्रतिशत ही थी। इस शिक्षा प्रणाली ने उच्च वर्गों को भारत के शेष समाज में पृथक् रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। ब्रिटिश समाज में बीसवीं सदी तक यह मानना था कि श्रमिक वर्ग के बच्चों को शिक्षित करने का तात्पर्य है उन्हें जीवन में अपने कार्य के लिए अयोग्य बना देना। ब्रिटिश शिक्षा प्रणाली ने निर्धन परिवारों के बच्चों के लिए भी इसी नीति का अनुपालन किया।

लगभग पिछले दो सौ वर्षों की भारतीय शिक्षा प्रणाली के विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यह शिक्षा नगर तथा उच्च वर्ग केंद्रित, श्रम तथा बौद्धिक कार्यों से रहित थी। इसकी बुराइयों को सर्वप्रथम गाँधी ने 1917 ई० में गुजरात एजुकेशन सोसायटी के सम्मेलन में उजागर किया तथा शिक्षा में मातृभाषा के स्थान और हिंदी के पक्ष को राष्ट्रीय स्तर पर तार्किक ढंग से रखा। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में शांति निकेतन, काशी विद्यापीठ आदि विद्यालयों में शिक्षा के प्रयोग को प्राथमिकता दी गई

सन् 1944 ई. में देश में शिक्षा कानून पारित किया गया। स्वतंत्रता प्राप्ति के उपरांत हमारे संविधान निर्माताओं तथा नीति-नियामकों ने राष्ट्र के पुनर्निर्माण, सामाजिक-आर्थिक विकास आदि क्षेत्रों में शिक्षा के महत्व को स्वीकार किया। इस मत की पुष्टि हमें राधाकृष्ण समिति (1949), कोठारी शिक्षा आयोग (1966) तथा नई शिक्षा नीति (1986) से मिलती है शिक्षा के महत्व को समझते हुए भारतीय संविधान ने अनुसूचित जातियों व जनजातियों के लिए शिक्षण संस्थाओं व विभिन्न सरकारी अनुष्ठानों आदि में आरक्षण की व्यवस्था की। पिछड़ी जातियों को भी इन सुविधाओं के अंतर्गत लाने का प्रयास किया गया। स्वतंत्रता के बाद हमारी साक्षरता दर तथा शिक्षा संस्थाओं की संख्या में निःसंदेह वृद्धि हुई है परंतु अब भी 40 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या निरक्षर है।

दुर्भाग्यपूर्ण बात यह है कि स्वतंत्रता के बाद विश्वविद्यालयों में उच्च शिक्षा व प्राविधिक शिक्षा का स्तर तो बड़ा है परंतु प्राथमिक शिक्षा का आधार दुर्बल होता चला गया शिक्षा का लक्ष्य राष्ट्रीयता, चरित्र निर्माण व मानव संसाधन विकास के स्थान पर मशीनीकरण रहा जिससे चिकित्सकीय तथा उच्च संस्थानों से उत्तीर्ण छात्रों में लगभग 40 प्रतिशत से भीअधिक छात्रों का देश से बाहर पलायन जारी रहा।

देश में प्रौढ़ शिक्षा और साक्षरता के नाम पर लूट-खसोट, प्राथमिक शिक्षा का दुर्बल आधार, उच्च शिक्षण संस्थानों का अपनी सशक्त भूमिका से अलग हटना तथा अध्यापकों का पेशेवर दृष्टिकोण वर्तमान शिक्षा प्रणाली के लिए एक नया संकट उत्पन्न कर रहा है पूँजीवादी अर्थव्यवस्था के नए चेहरे, निजीकरण तथा उदारीकरण की विचारधारा से शिक्षा को भी उत्पाद की दृष्टि से देखा जाने लगा है जिसे बाजार में खरीदा बेचा जाता है। इसके अतिरिक्त उदारीकरण के नाम पर राज्य भी अपने दायित्वों से विमुख हो रहे हैं। इस प्रकार सामाजिक संरचना से वर्तमान शिक्षा प्रणाली के संबंधों, पाठ्यक्रमों का गहन विश्लेषण तथा इसकी मूलभूत दुर्बलताओं का गंभीर रूप से विश्लेषण की चेष्टा न होने के कारण भारत की वर्तमान शिक्षा प्रणाली आज भी संकटों के चक्रव्यूह में घिरी हुई है। प्रत्येक दस वर्षों में पाठ्य-पुस्तकें बदल दी जाती है लेकिन शिक्षा का मूलभूत स्वरूप परिवर्तित कर इसे रोजगारोन्मुखी बनाने की आवश्यकता है। हमारी वर्तमान शिक्षा प्रणाली गैर-तकनीकी छात्र-छात्राओं की एक ऐसी फौज तैयार कर रही है जो अंततोगत्वा अपने परिवार व समाज पर बोझ बन कर रह जाती है। अतः शिक्षा को राष्ट्र निर्माण व चरित्र निर्माण से जोड़ने की नितांत आवश्यकता है।

• शिक्षा का व्यावसायिकरण

शिक्षा के बिना मानव पशु के समान है, क्योंकि शिक्षा ही सभ्यता और संस्कृति के निर्माण में सहायक होती है। आजकल शहरों में तो क्या गांव में भी शिक्षा का व्यवसायीकरण हो गया है। सरकारी स्कूलों में केवल निर्धन वर्ग के बच्चे ही पढ़ने के

लिए आते हैं। क्योंकि निजी संस्थाओं में फीस के रूप में बड़ी रकम वसूली जाती है। जिसे केवल पैसे वाले ही अदा कर पाते हैं। आज अच्छी और उच्च शिक्षा का व्यवसायीकरण हो रहा है। निजी शिक्षण संस्थानों के संचालक मनमानी फीस वसूल कर रहे हैं|। या यूं कहें शिक्षा का बाजार लगाकर लूट मचा रखा है। जहां एक ओर शिक्षा का स्तर गिरता जा रहा है, वहीं दूसरी तरफ फीस बढ़ती जा रही है। आज के दौर में बढ़ती फीस के कारण मनपसंद स्कूल में प्रवेश लेना ही अपने आप में बढ़ी चुनौती है। फीस न होने के कारण कुछ लोग अपने बच्चों को स्कूल भेजने में भी असमर्थ हैं। इसके साथ ही किताबें, वर्दी आदि खर्चे भी बहुत हो गए हैं। स्कूल का व्यवसाय इतना लाभदेय हो गया है कि स्कूल वालों ने पुस्तक और ड्रेस का व्यापार करना भी शुरू कर दिया|

आज एक से बढ़कर एक शिक्षण संस्थान नित जन्म ले रहे हैं। जहां सिर्फ अमीर वर्ग के लोग ही शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं। संपन्नता और व्यवसायिकता कि इस अंधी दौड़ में शिक्षा रूपी व्यवसाय तो जरूर फल-फूल रहा है पर शिक्षा का मूल उद्देश खत्म हो गया है।

- **शिक्षा का राजनीतिकरण**

आजकल स्कूल में जो शिक्षा दी जा रही है, वह वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में कहां तक उचित है, इस पर राजनीतिक प्रभाव कितने पड़ रहे हैं? क्या इन राजनीतिक हस्तक्षेप के कारण बालक का अहित नहीं हो रहा है? इनके भविष्य निर्माण में बाधक नहीं हो रहा है, ऐसे अनेक प्रश्न हैं, जो अनुत्तरित हैं। हमारे देश में लोकतंत्र है, जो भी सत्ताधारी पार्टियां आती है, वह शिक्षा में दखल देती है। अपनी वोटिंग उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उसके अनुरूप पाठ्यक्रम बदल देती है। जिसका राष्ट्र निर्माण में कोई योगदान नहीं होता। आज पाठ्यक्रम में देशप्रेम की भावना जगाने वाली कविताओं को जगह नहीं मिलती है। पहले की तुलना में अध्यापकों को भी अन्य कामों में व्यस्त कर दिया गया है, जिससे वह उन्हीं कामों में उलझा रहता है।

पढ़ाने के काम को सरकार व अध्यापकों ने दोयम दर्जे का काम मान लिया है। कुल मिलाकर इन सब से शिक्षा का स्तर गिर रहा है। इसका स्तर उठाना है। बालकों को संस्कारी बनाना है, तो शिक्षा का राजनीतिकरण रोकना होगा। इसे स्वायत्त संस्था बनाना होगा, जिसमें किसी का हस्तक्षेप ना हो यहीं बालकों के व देश के हित में होगा।

- **शिक्षण व्यवस्था में क्षरण को पश्चिमी पद्धति जिम्मेदार**

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था क्षरण कि ओर है। इसके लिए केवल छात्र ही नहीं अभिभावक व शिक्षक भी जिम्मेदार है। पुरातन गुरु-शिष्य परंपरा हमारी देशी शिक्षा पद्धति थी जिसमें छात्र अनुशासन में बंधकर गुरु का सम्मान करते थे, तथा शिक्षा पाते थे परन्तु अब ऐसी स्थिति नहीं है, शिक्षा का बाजारीकरण हो गया है। जिस कारण वर्तमान शिक्षा प्रणाली क्षरण की ओर है. छात्र को शिक्षक का डर नहीं है, अभिभावक भी इस बात पर ध्यान नहीं देते हैं अभिभावक बच्चों को शिक्षकों के पास भेजते तो है पर जानने का प्रयास नहीं करते कि हमारा पुत्र या पुत्री पढ़ाई कर रहा है या नहीं। वर्तमान में शिक्षक छात्र संबंधों में कमी आई है, यह एक औपचारिकता के स्तर पर आ गया है। छात्रों में सम्मान देने की भावना में कमी आई है। इसमें छात्र ही दोषी नहीं बहुत हद तक शिक्षक भी जिम्मेदार है, देखने में आ रहा है कि बहुत जगह शिक्षक इस सम्मान का गलत फायदा उठाते हैं।

पूर्व में गुरु शिष्य सम्बन्ध निःस्वार्थ था वर्तमान में यह स्वार्थपरक हो गया है। पैसा कमाने की सारी हदें शिक्षक पार कर चुके हैं जिस कारण यह क्षरण देखने को मिल रहा है। समय आ गया है कि अभिभावक, गुरू, छात्र चिन्तन करें। दूसरे पाश्चात्य शिक्षा पद्धति भी इस क्षरण के लिए जिम्मेदार है। इसे पुनर्प्रतिस्थापित करने के लिए एक प्रकार की शिक्षा की व्यवस्था करना पड़ेगा। प्राचीन गुरु शिष्य परंपरा के टूटने से वर्तमान में शिक्षा की यह दुर्गति हुई है। पाश्चात्य शिक्षा पद्धति ने हमारी संस्कृति पर घात किया है। इस पर हम सभी को गहन चिन्तन के साथ राजनयिक को भी गंभीरता से शिक्षा व्यवस्था में बदलाव करना होगा

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में क्षरण के ढेर सारे कारण हैं। सरकारी शिक्षा व्यवस्था का पतन होने के साथ ही निजी कोचिंग क्लासेज व निजी स्कूल का उदय का कारण बना। सरकारी विद्यालयों में न तो मजबूत आधारभूत संरचना है न ही योग्य शिक्षक जिस कारण शिक्षा का बाजारीकरण होते चला गया जो अब चरम पर है। इस समानांतर शिक्षा प्रणाली में पैसा कमाना भव्य ध्येय रह गया है। जिस कारण छात्र पढ़े या नहीं पढ़े पैसा आना चाहिए हॉबी हो गया है। जिस हमें सधारने के लिए कड़ी मेहनत की आवश्यकता है। हम जब से अपनी शिक्षा पद्धति में पश्चिमी प्रणाली को लाए हैं। शिक्षक छात्र के बीच सम्मान देने की खाई बढ़ी है। पहले जहां प्रणाम का स्थान था अब गुड मॉर्निंग व गुड इवनिंग पर आ गया है। इसमें आप शिक्षा में किस प्रकार की आशा कर सकते हैं। हमें सबसे पहले प्राथमिक स्तर की शिक्षा पर खास ध्यान देना होगा। इसे संस्कृति से जोड़ना होगा। तभी आप देसी संस्कृति वाली शिक्षा की कल्पना कर सकते हैं।

- **शिक्षा की उपेक्षा**

शिक्षा किसी भी प्रदेश के विकास की रीढ़ होती है। इसमें भी प्राथमिक शिक्षा तो भवन की नींव की तरह है। यदि नींव ही कमजोर हो गई तो मजबूत भवन की उम्मीद बेमानी हो जाती है। दुर्भाग्य से पंजाब के तमाम सरकारी स्कूलों में ऐसा ही हो रहा है। स्कूलों में आधारभूत ढांचे से लेकर अध्यापकों तक का अभाव है। एक अध्यापक पांच-पांच कक्षाएं संभाल रहे हैं। ऐसी स्थिति के कारण ही अभिभावक सरकारी स्कूलों में अपने बच्चों का दाखिला करवाने से परहेज करते हैं और प्राइवेट स्कूलों को प्राथमिकता देते हैं। सरकारी स्कूलों की दयनीय स्थिति के कारण ही गली-गली में प्राइवेट स्कूल खुल गए हैं। तमाम प्राइवेट स्कूलों ने शिक्षा को व्यवसाय बना लिया है और अभिभावकों का भरपूर शोषण कर रहे हैं।

होशियारपुर के एक गांव 'कितना' के सरकारी स्कूल की बात करें तो यहाँ चार वर्षों से कोई अध्यापक है ही नहीं ऐसी खबरें हैरान करती है, साथ ही सरकार व शिक्षा विभाग के आला अधिकारियों की कार्यप्रणाली पर सवालिया निशान भी लगाती है। यह स्थिति देश के संपन्न राज्यों में शुमार पंजाब की हो तो और आशचर्य होता है। आखिर सरकार को स्कूलों में अध्यापक की व्यवस्था करने के लिए कितना वक्त चाहिए। क्या सरकार इतनी लाचार है कि चार सालों में स्कूल में अध्यापक भी नहीं नियुक्त नहीं कर सकती। गांव कितना के स्कूल में एक अध्यापिका है भी तो वह तीन साल में तीसरी बार विदेश गई है। यहां बच्चों को पढ़ाने के लिए एक एनआरआइ ने अपने स्तर पर वेतन देकर दो अध्यापिका की व्यवस्था की है। ऐसी स्थिति में यह तो तय है कि यहां पढ़ने वाले बच्चों का भविष्य प्रभावित होगा ही। करीब तेरह साल पहले केंद्र सरकार ने शिक्षा का अधिकार कानून बनाया था। इसका मकसद यही था कि हर बच्चे को शिक्षा मिले क्योंकि यह उसका अधिकार है। लेकिन सिर्फ कानून बन जाने से बात नहीं बनती। यह तो सरकारों को देखना होगा कि कानून के मुताबिक काम हो रहा है या नहीं। पंजाब सरकार को तत्काल ऐसे स्कूलों की पहचान कर वहां अध्यापकों की व्यवस्था करनी चाहिए और बार-बार विदेश जाने वाले अध्यापकों से सख्ती से पेश आना चाहिए क्योंकि शिक्षा की उपेक्षा देश के भविष्य से खिलवाड़ करने जैसा है।

- **भारतीय संस्कृति की उपेक्षा**

शिक्षा की संस्था सभ्य समाज की एक जरूरी संस्था का स्थान ले चुकी है। अतः शिक्षा किस लिए हो य उसका क्या उद्देश्य हो, यह प्रश्न समाज और व्यक्ति के जीवन के संदर्भ में उठना स्वाभाविक है। देश में आजकल यह बात आम होने लगी है कि हमारी शिक्षा अपने परिवेश संस्कृति से कटती जा रही है। जिस समाज या संस्कृति से शिक्षा का पोषण होता है और जिसके लिए वह प्रासंगिक होनी चाहिए वह एक दुःस्वप्न सरीखी होती जा रही है। इन सबके बीच जो पढ़-लिख जाता है वह मानो एक बड़ी यांत्रिक व्यवस्था के उपकरण के रूप में बदल जाता है। प्रतिस्पर्धा की दुनिया में उसका उद्देश्य सफलता, उपलब्धि और भौतिक प्रगति के मार्ग पर आगे बढ़ने तक सीमित हो रहा है। इस तरह यह शिक्षार्थी के मानस को संकुचित बनाने का

काम कर रही है। एक ओर तो विश्वस्तरीय शिक्षा देने का संकल्प लिया जाता है तो दूसरी ओर सर्वत्र एक ही दरें पर पढ़ाई करने की कवायद भी जारी है।

आज प्रचलित शिक्षा मनुष्य को स्वचालित रोबोट बनाने पर जोर देती है। इस शिक्षा से निकलने वाले होनहार युवाओं की स्थिति विचित्र हो रही है। जिस सीढी के सहारे। चढ़कर वे ऊपर पहुंचते हैं उस सीढ़ी से बेझिझक अलग हो जाते हैं। ये उस भूमि से अलग हो जाते हैं जिसने जीवन दिया। यह शिक्षा सांस्कृतिक विचार, विश्वास, सहयोग, सहनशीलता आदि की कीमत पर दी जा रही है। लिहाजा उनमें सामाजिक सृजनात्मकता और निजी लाभ के आगे किसी तरह की सामाजिक सकारात्मकता विरल होती जा रही है। यदि हम स्कूली शिक्षा को लें जो शिक्षा का प्रवेश द्वार है, तो पाते हैं कि भारत में पहले कई तरह के विद्यालय चलते रहे हैं। यहां प्राचीन काल में गुरुकुल पाठशाला और मदरसा मौजूद थे। वहां आने के बाद अंग्रेज अधिकारियों ने प्रारंभिक शिक्षा के संबंध में जो रिपोर्ट लिखीं वे आश्चर्यजनक रूप से इसकी अच्छी स्थिति प्रदर्शित करती है। उनकी नजरों में तब यहां की शिक्षा संस्कृति से जुड़ी थी। बाद के दिनों में कोठारी शिक्षा आयोग द्वारा संस्कृति पर ध्यान देने की बात की गई थी। उसने इस बात पर जोर दिया था कि कार्यक्षेत्र, शिक्षा, पर परिवार व्यक्ति और समाज के बीच कोई भीड़ नहीं होना चाहिए)

महात्मा गांधी ने भी नई 'तालीम' का विचार दिया था जिसमें शरीर, हाथ, बुद्धि सब का मतलब होता है और इसके लिए उन्होंने स्थानीय संसाधन के उपयोग का सुझाव दिया था। इसमें निजी बौद्धिकता पर अतिरिक्त बल न देकर शरीर, मन, आत्मा सब पर ध्यान देने की बात कही गई। इसके अंतर्गत स्वावलंबन, देशभक्ति, आत्म-संपन्नता और संयम जैसे जीवन मूल्यों पर बल देना प्रस्तावित है। प्राथमिक शिक्षा से मोहभंग के साथ कई विकल्पों पर काम शुरू हुआ। गुरुदेव रवींद्रनाथ ने शांतिनिकेतन के पास श्रीनिकेतन बनाया था। रुक्मिणी देवी अरुडेल, एनी बेसेंट और जे कृष्णमूर्ति ने भी अलग-अलग प्रयास किए। इन सब प्रयासों में जीवन कौशल और कला पर बल दिया गया ताकि छात्रों को आस-पास की दुनिया से जुड़ने का भी अवसर मिले। उनका मानना था कि समग्र व्यक्तित्व के विकास के लिए प्राचीन और नए हुनर भी आने चाहिए जो संस्कृति विशिष्ट होते हैं।

शिक्षा के मूल्य की अभिव्यक्ति मूर्त और अमूर्त दोनों माध्यमों से होती है। समाज और समुदाय व्यक्ति से ऊपर होते हैं। भारत की समृद्ध वाचिक परंपरा बड़ी प्राचीन है। आज जो शिक्षा (मस्तिष्क) विदेश से लाकर देश में प्रत्यारोपित की जा रही है वह एक हद तक भारतीय मूल्यों को जड़ से विस्थापित कर रही है। आर्थिक संपन्नता से सांस्कृतिक विपन्नता की भरपाई नहीं हो सकती। नैतिक मूल्यों का अभाव, तनाव, इंद्री, हिंसा और असहन अतिरिक्त और कोई साधन उपलब्ध नहीं है।

तो किसी भी तरह ग्राह्य नहीं है। मनुष्यता के विकास के लिए संस्कृति आधारित भारतीय संस्कृति की दृष्टि में अच्छी दुनिया वह है जिसमें बहुलता, पारस्परिकता और सह अस्तित्व हो, पर हम इसे छोड़कर अपर अधिकार करने चले और उसी ने हम परअधिकार जमा लिया।

सांस्कृतिक क्षति के चलते हम बोलने और सोचने को लेकर विभाजित व्यक्तित्व वाले होते जा रहे हैं। अर्थात बाहर से ग्रहण किया या लिया, पर अंदर जो मौजूद है वह गया भी नहीं। अब इंद्री और दुविधा के साथ किंकर्तव्यविमूढ़ हो रहे हैं। औपनिवेशिक शक्तियों की भाषा हमारी माध्यम हो गई है। धर्म, भाषा, पशु, पक्षी, प्रतिभा, पुरातत्य, कला, राजनीति और अर्थशास्त्र आदि के क्षेत्रों में भारतीय अपनी शिक्षा से अपरिचित होते जा रहे हैं| हमें अपनी संस्कृति की भी चिंता नहीं है। विद्यालयों में प्रक्रिया के स्तर पर अध्यापक और सहपाठी के साथ सहयोग कैसे स्थापित किया जाए यह आज की कठिन चुनौती बन गई है। आज शिक्षा एक खास तरह का व्यापार बनती जा रही है। विद्यालयों के साथ समाज का रिश्ता नहीं बन

रहा है और जन भागीदारी बहुत सीमित हो गई है। आधुनिकता और यहां की प्राचीन ज्ञान परंपरा के बीच आज तक सामंजस्य नहीं बन पाया है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति तो हो रही है, पर इन सबके बीच इंसान खो गया है।

आज बुद्ध, महावीर, ईसा, महात्मा गांधी के विचार कहां हैं? हम किधर जा रहे हैं? आज यह विचारणीय सवाल है। हमें भौतिकता के मिथक तोड़ने होंगे। मशीनीकरण की होड़ से बचना होगा। प्राचीन भारतीय शिक्षा प्रणाली में स्थित सामाजिक चेतना, ब्रह्मांडीय चेतना ही आधुनिक आत्मकेंद्रित उपभोक्तावाद की समस्या का समाधान कर सकती है। अहं का प्रकृति पर विजय की जगह प्रकृति और समाज के बीच संबंध स्थापित करने से ही स्वराज, स्वदेशी और सर्वोदय के विचार जीवित होंगे। शांति की संस्कृति का विकास नैतिक अनुशासन से ही आ सकेगा। और तभी बच्चे में श्रेष्ठ का आविष्कार करने की ललक और स्वावलंबी जीवन व्यतीत करने की इच्छा पनप सकेगी। तभी पूर्ण सामाजिक विकास और धार्मिक समानता भी आ पाएगी।

दरअसल विचारों का विकास और उनकी समाज में उपस्थिति के कई आधार होते हैं। प्रायः माना जाता है कि आधुनिकता का विचार पश्चिम से भारत की ओर आगे बढ़ा। यहां की अपनी आधुनिकता को औपनिवेशिक आधुनिकता ने नकारात्मक ढंग से प्रभावित किया। यहाँ एक तरह की संकर या मिश्रित आधुनिकता का आरंभ हुआ। यहाँ की आधुनिकता पश्चिमी आधुनिकता से जटिल रूप में जुड़ी और फिर शिक्षा का सांस्कृतिक विमर्श भी बाधित हुआ। जाहिर है शिक्षा का प्रयोजन भविष्य के लिए तैयारी और नियोजन से जुड़ा है। इसलिए इसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। ऐसे में जरूरी है कि हमारी शिक्षा प्रणाली में समय के साथ आ गई इन खामियों को दूर किया जाए।

● शिक्षा का धर्म से विमुखीकरण

प्राचीन काल में शिक्षा और धर्म का नजदीकी संबंध था। शिक्षा की शुरुआत धर्म के आधार पर हुई थी। शिक्षा धर्म के अधीन थी। धर्म का महत्व अधिक था। धर्म गुरुओं द्वारा शिक्षा की प्राप्ति विद्यार्थियों को होती थी। धार्मिक शिक्षा के कारण समाज में नैतिकता व्याप्त थी । लेकिन जैसे-जैसे विज्ञान युग की शुरुआत हुई साथ-साथ हम आधुनिकता की ओर बढ़े तो धार्मिक कल्पनाओं को झूठा साबित करने लगे और आस्था अनास्था में बदलने लगी। शिक्षा का स्तर भी बदलने लगा। शिक्षा का माध्यम तथा सोच धरि-धरि बदलने लगी। शिक्षा से नैतिकता, धर्म और मूल्य परकता का ह्रास होने लगा। शिक्षा अब केवल आर्थिक दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण हो गई थी। धर्म और नैतिकता से शिक्षा का संबंध धीर-धीरे कम होने लगा। नैतिक विचार, धार्मिक मान्यताओं का लोप होता चला गया और शिक्षा का उद्देश्य केवल जीविकोपार्जन था। कालांतर में शिक्षा का व्यवसायीकरण होने लगा। समय समय पर पुनः यही संस्कृति और नैतिकता की शिक्षा में पुनः स्थापित करने में अनेक महापुरुषों ने योगदान दिया। जिनमें कई धर्मगुरु समाज सुधारक आदि शामिल हैं।

1.3 शिक्षा में विभिन्न समाज सुधारकों का योगदान

शिक्षा सतत विकास की प्रक्रिया है। प्राचीन काल में शिक्षा धर्म के अधीन थी। जिसमें नैतिक मूल्य, धार्मिक मूल्यों पर आधारित थी। वर्तमान विज्ञान युग में शिक्षा प्रणाली में धार्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक मूल्यों का अभाव पाया जा रहा है। इसलिए प्राचीन काल से ही विभिन्न महापुरुषों, धर्मगुरु तथा शिक्षा के स्तर को उठाने के लिए प्रयास किए गए। जिनके प्रयासों ने ही शिक्षा को धार्मिक, सांस्कृतिक, नैतिक मूल्यों पर आधारित करते हुए शिक्षा को भारतीय संस्कृति से जोड़े रखा। विभिन्न धर्म गुरुओं के द्वारा किए गए प्रयास निम्न है-

❖ गौतम बुद्ध

गौतम बुद्ध की शिक्षाओं पर ही बौद्ध धर्म का प्रचलन हुआ। बौद्ध धर्म में नैतिक विकास की शिक्षा पर अधिक जोर दिया। वर्तमान में भी शिक्षा द्वारा नैतिक विकास की बात की जा रही है। शिक्षा द्वारा मनुष्य को किसी कला-कौशल, उद्योग अथवा व्यवसाय में प्रशिक्षित करने की शुरुआत यद्यपि वैदिक काल में प्रारंभ हो गई थी। परंतु व्यवस्थित रूप बौद्ध दार्शनिकों द्वारा मिला।

भारत में शैक्षिक प्रशासन, शैक्षिक संगठन, विद्यालय एवं विश्वविद्यालय शिक्षा और समूह शिक्षा की शुरुआत कर बौद्धों ने हजारों वर्ष पूर्व ही वर्तमान शिक्षा की नींव रख दी थी।

❖ आदि शंकराचार्य

शंकराचार्य के अद्वैत वेदांत दर्शन को भारतीय चिंतन धारा का चरमोत्कर्ष माना जाता है यह संपूर्ण ब्रह्मांड की एकता (ब्रह्म तत्व) और अनेकता (ब्रह्म के महत्त्व) का स्पष्ट ज्ञान कराकर ब्रह्मांड की अनंत शक्ति से परिचित कराता है। शंकराचार्य ने जो बातें शिक्षा के बारे में बताइए हैं वह सार्वभौमिक एवं सार्वकालिक मानी जाती हैं। शंकर ने शिक्षा प्रक्रिया के स्वरूप को अलग से स्पष्ट करने का कोई प्रयास नहीं किया है। परंतु उन्होंने उसके उद्देश्य निश्चित करने में भारी भूमिका अदा की है। उनकी दृष्टि से जीवन का अंतिम उद्देश्य भेद दृष्टि की समाप्ति और अभेद दृष्टि की प्राप्ति होती है। उन्होंने शिक्षा के द्वारा मनुष्य के शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक, नैतिक व चारित्रिक इंद्रिय निग्रह एवं चित् शुद्धि तथा आध्यात्मिक विकास पर बल दिया। शिक्षा की पाठ्यचर्या के संबंध में शंकर ने मनुष्य के व्यावहारिक जीवन के लिए व्यावहारिक विषय एवं क्रियाओं तथा आध्यात्मिक जीवन के लिए आध्यात्मिक विषयों पर क्रियाओं को सम्मिलित करने की बात कही है। परंतु व्यावहारिक जीवन के प्रकाशतर से आध्यात्मिकता पर आधारित करना चाहते थे। वर्तमान में अपेक्षित वर्ग हीन, धर्मनिरपेक्ष एवं समाजवादी व्यवस्था वेदांत कि अभेद दृष्टि के द्वारा सहजता से प्राप्त की जा सकती है।

❖ गुरु नानक

गुरु नानक शिक्खों के पहले गुरु थे। अंधविश्वास और आडंबरों के गहन विरोधी थे उन्होंने अपने अनुयायियों को दस उपदेश दिए जो सदैव प्रासंगिक बने रहेंगे। गुरु नानक की शिक्षा का मूल निचोड़ यही है कि परमात्मा एक अनंत सर्वशक्तिमान और सत्य है। मूर्ति पूजा आदि निरर्थक है। इन्होंने हिंदू धर्म में फैली कुरीतियों का विरोध किया।

❖ गुरु गोविंद सिंह

गुरु गोविंद सिंह सिक्खों के दसवें गुरु थे। उन्होंने सदा प्रेम, एकता, भाईचारे का संदेश दिया। उन्होंने खालसा पंथ की स्थापना (1699) में बैसाखी के दिनों की जो सिख इतिहास का सबसे महत्वपूर्ण माना जाता है। गुरु गोविंद सिंह को ज्ञान, सैनिक क्षमता का और दूरदृष्टि का सम्मिश्रण माना जाता है। इनके द्वारा बताई बातें जो मानव जीवन के हर पहलू पर प्रासंगिक है | जैसे अपनी जीविका चलाते हुए ईमानदारी बरतें, कमाई का दसवां हिस्सा दान दे इत्यादि बातें नैतिक और सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

इसी क्रम में आधुनिक वर्तमान समय में कुछ धर्मगुरुओं ने धार्मिक, विचारों तथा आध्यात्मिक सांस्कृतिक मूल्यों से अनेक कार्य किए, जो समाज और मानव जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध हो रहे हैं। नैतिक तथा धार्मिक मूल्यों को शिक्षा में शामिल करते हुए शैक्षिक क्रियाकलापों से विशेष योगदान दिया जिनमें से कुछ प्रमुख जैसे श्री श्री रविशंकर,सुधांशु महाराज, ऋतम्भरा जी, मोरारी बापू आदि।

रवि शंकर सामान्यतः श्री श्री रविशंकर के रूप में जाने जाते हैं। तथा विश्व स्तर पर एक आध्यात्मिक नेता एवं मानवतावादी धर्मगुरु है। उनके भक्त उन्हें आदर से प्रायः "श्री श्री के नाम से पुकारते हैं। वे आर्ट ऑफ लिविंग फाउंडेशन के संस्थापक हैं। यह संस्था पूरे विश्व में कार्य करती है। इनका कथन है- "मैं एक तनाव और हिंसा मुक्त समाज चाहता हूं।" श्री श्री रविशंकर एक ऐसी दुनिया बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं जिसमें रहने वाले लोग ज्ञान से परिपूर्ण और तनाव से मुक्त रह सके|

❖ दयानन्द सरस्वती

वेदों को छोड़ कर कोई अन्य धर्मग्रन्थ प्रमाण नहीं है - इस सत्य का प्रचार करने के लिए स्वामी जी ने सारे देश का दौरा करना प्रारम्भ किया और जहां-जहां वे गये प्राचीन परम्परा के पण्डित और विद्वान उनसे हार मानते गये। संस्कृत भाषा का उन्हें अगाध ज्ञान था। संस्कृत में वे धाराप्रवाह बोलते थे। साथ ही वे प्रचण्ड तार्किक थे।

उन्होंने ईसाई और मुस्लिम धर्मग्रन्थों का भली-भांति अध्ययन-मन्थन किया था। अतएव अपनें चेलों के संग मिल कर उन्होंने तीन-तीन मोर्चों पर संघर्ष आरंभ कर दिया। दो मोर्चे तो ईसाइयत और इस्लाम के थे किन्तु तीसरा मोर्चा सनातनधर्मी हिन्दुओं का था। दयानन्द ने बुद्धिवाद की जो मशाल जलायी थी, उसका कोई जवाब नहीं था।

दयानन्द के नाम से डीएवी की स्थापना लाला हंसराज ने सन 1886 में लाहौर में की थी। डीएवी के अंतर्गत आज 919 शिक्षण संस्थाएं हैं, जिनमें 461 हाईस्कूल हैं। जिसकी वार्षिक बजट करीब 2 अरब है। इन स्कूलों का संचालन दयानंद एंग्लो-वैदिक कॉलेज ट्रस्ट और प्रबंधन सोसाइटी के द्वारा किया जाता है।

साध्वी ऋतम्भरा जिसे लोकप्रिय रूप में दीदी माँ के नाम से जाना जाता है। वह एक बहुत ही अध्यात्मिक नेत्री और समाज सुधारक हैं। उन्हें भारतीय संस्कृति का बहुत सम्मान और हिंदू धर्म का प्रचारक है। भारत में महिलाओं और बच्चों के गांव वात्सल्यग्राम की संस्थापक हैं। जिसमें गांव छोड़ने वाली जरूरतमंद महिला और बच्चों को के लिए प्रेम पूर्ण और पोषण वातावरण प्रदान किया जाता है।

इसी क्रम में आचार्य प्रशांत का नाम भी बड़े आदर के साथ इस सूची क्रम में जोड़ा जा सकता है जिन्होंने अपने बेबाक विचारों एवं कथनों से सर्वसमाज के लिए एक आईना प्रस्तुत किया है।

भारतीय आर्य परम्परा का प्रारम्भ वैदिक काल से माना जाता है। समग्र भारतीय चिन्तन एवं समाज दर्शन इसी आर्य परम्परा का उदाहरण है। भारतीय मनीषा सदैव लोकधर्मी रही है। वैदिक काल से लेकर अधुनातन समाज तक भारतीय संस्कृति में लोकनायकत्व की प्रतिष्ठा सत्ता केन्द्रों को नहीं, लोकोन्मुखी प्रज्ञापुरुषों को प्राप्त हुई है। अपने उर्ध्वगामी चिन्तन से लोक को दिशा देने वाले व्यक्तित्व ही भारतीय जन के प्रेरणा स्रोत एवं उपास्य रहे हैं। मनु, विश्वामित्र, व्यास, बुद्ध, शंकराचार्य, रामानन्द, तुलसीदास, विवेकानन्द, धर्मसम्राट स्वामी करपात्री जैसे लोक नायक सत्ताधिष्ठित नहीं थे। वे जनता के नियन्ता थे। उन्होंने लोक शक्ति को प्राणवान किया है। भारतीय संस्कृति में ऐसे लोकनायकों को ही सन्त अथवा महात्मा से विभूषित किया जाता है। सन्त मुक्तिकामी नहीं होता मुक्ति तो मानवमात्र का एक पुरुषार्थ है, जिसकी महत्ता व्यक्ति मात्र के लिए है। सन्त लोककामी होते हैं, उनकी मुक्ति सर्वात्मवाद की वैश्विक प्रतिष्ठा में है।

अनादिकाल से प्राणिमात्र के ऐहलौकिक एवं पारलौकिक अभ्युदय प्राप्त कराने वाले सनातन धर्म की जगतगुरु परम्परा में ऐसे विरले महापुरुष इस धराधाम पर अवतीर्ण हुए हैं, जिन्होंने अपने दिव्यज्ञान, शाश्वत चिन्तन एवं गहनीय तप के द्वारा सम्पूर्ण विश्व का सफल मार्गदर्शन किया है।

1.4 समस्या का प्रादुर्भाव

शिक्षा मनुष्य के जीवन में जीवन पर्यंत चलने वाली प्रक्रिया है। किसी भी देश के विकास एवं उसके सामाजिक उत्थान में उस देश के नागरिकों का सहयोग अति आवश्यक होता है। अतः शिक्षा एक सामाजिक प्रक्रिया है। प्राचीन काल में शिक्षा धार्मिक, संस्कृति एवं नैतिकता से परिपूर्ण होती है। जैसे-जैसे हम आधुनिकता और विज्ञान युग की ओर बढ़ते गए शिक्षा प्रणाली से धर्म संस्कृति और नैतिकता का लोप होता गया। विज्ञान युग तक आते-आते शिक्षा में कई बदलाव आए| शिक्षा का व्यवसायीकरण, राजनीतिकरण हुआ। परंतु जब तक शिक्षा जीवन के मूल्यों, आदर्शों एवं मान्यताओं का परिचय नहीं देतीं तब तक वह शिक्षा नहीं कहीं। जा सकती।

वर्तमान समय में शिक्षा का धर्म से विमुखीकरण हुआ है, और शिक्षा व्यवस्था में अनेक समस्याएं सामने आ रही हैं। शिक्षा के व्यवसायीकरण के बाद समाज में आर्थिक संपन्न लोग ही अपने बच्चों को शिक्षा दिला रहे हैं तथा गरीब, पिछड़े असहाय बच्चे आज भी अच्छी शिक्षा के लिए वंचित हैं। इन वंचित बच्चों को अच्छी शिक्षा दिलाने व उनकी हर संभव मदद को कुछ धार्मिक सामाजिक संस्थाएं प्रयास कर रहीं हैं।

1.5 अध्ययन की आवश्यकता

प्राचीन काल में शिक्षा की उपादेयता आवश्यकता एवं महत्व को स्वीकार किया गया शिक्षा एक सार थी और जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक थी। यही कारण है कि शिक्षा के ऊपर सभी लोगों का ध्यान या साधारण जनता से लेकर बड़े-बड़े दार्शनिक एवं राजकीय पुरुष भी इस पर विचार करते रहे।

भारत में प्रचलित शिक्षा पद्धति के मूल में पाश्चात्य जगत के भौतिकतावादी दर्शन की छाप स्पष्ट दृष्टिगोचर होती थी। यह पद्धति हमारे देश के आध्यात्मिक संस्कृति के सर्वधा प्रतिकूल थी यह हमें जीवन के उच्च लक्ष्य से विमुख करके पतन की ओर ले चलती है। अंतः भारत को एक ऐसी शिक्षा नीति की आवश्यकता थी जिसमें राष्ट्रीय तथ्यों की प्रमुखता हो ताकि भारत के प्राचीन गौरव को प्रतिष्ठापित किया जा सको वर्तमान शिक्षा की नींव एक ठोस जीवन दर्शन भारत के आध्यात्मिक दर्शन पर खड़ी की जानी चाहिए थी जिससे भारतीय जाति में सुदृढता एवं आत्मविश्वास आ सके और भारत सम्पूर्ण विश्व में अपनी आध्यामिकता का संदेश देकर विशिष्ट एवं निदृष्ट उद्देश्य को प्राप्त कर सकें

वर्तमान शिक्षा प्रणाली आधुनिक भारतीय परिवेश में अपने उद्देश्य की प्राप्ति में असफल सिद्ध हो चुकी है तथा सांस्कृतिक मूल्यों में गिरावट एवं नैतिकता में ह्रास दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। जिससे शोधकर्ती के मन मस्तिष्क में यह विचार आया कि आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक रूप से अविकसित भारत जैसे देश के लिए आचार्य प्रशांत द्वारा दर्शायी गयी शिक्षा प्रणाली का समावेश नवयुग के पाठ्यक्रम में आवश्यक है।

1.6 समस्या कथन

शोधकर्ता द्वारा शोधकार्य के लिए जिस समस्या का चयन किया गया है, उसका शीर्षक इस

प्रकार है—

"आचार्य प्रशांत का शैक्षिक योगदान"

1.7 अध्ययन के उद्देश्य

किसी भी शोध अध्ययन में उद्देश्यों का निर्धारण उस अध्ययन को निश्चित दिशा प्रदान करता है जिससे अध्ययन सरल व सुव्यवस्थित सुगम हो जाता है। अतः इस शोध अध्ययन का उद्देश्य इस प्रकार हैं भारतीय शिक्षा के सन्दर्भ में आचार्य प्रशांत के शैक्षिक विचारों का निरीक्षण, परीक्षण एवं मूल्यांकन करना।

- आचार्य प्रशांत के दार्शनिक विचारों का अध्ययन करते हुए उनके शैक्षिक विचारों पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन एवं विश्लेषण करना।
- आचार्य प्रशान्त के शैक्षिक विचारों को प्रभावित करने वाले सामाजिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक, आध्यात्मिक, नैतिक एवं मनोवैज्ञानिक तत्वों का अध्ययन करना।
- वर्तमान शिक्षा के सन्दर्भ में आचार्य प्रशान्त के शैक्षिक मूल्यों एवं विचारों की उपादेयता का निर्धारण इस शोध के माध्यम से शिक्षा दार्शनिकों की परम्परा में आचार्य प्रशान्त का स्थान निर्धारण करते हुए अग्रिम नवीन शैक्षिक शोधों की खोज करना
- आचार्य प्रशान्त के शिक्षा पद्धति से वर्तमान भारतीय शिक्षा क्या लाभ प्राप्त कर सकती है इसका विश्लेषण करना।
- शिक्षा जगत हेतु कतिमय बहुमूल्य व्यावहारिक सुझाव प्रस्तुत करते हुए शोध कर्ताओं के सम्मुख शोध के नये क्षेत्रों का उद्घाटन करना।

1.8 सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन

किसी शोध अध्ययन में सम्बन्धित शोध साहित्य का अध्ययन नितांत आवश्यक है। पूर्व के निरीक्षण व मूल्यांकन करने से शोधकर्ता को उस विषय के विभिन्न पहलुओं पर किए गए कार्यों एवं परिणामों का पता लगता है। इससे शोधकर्ता अपने को निर्धारित कर सकता है। समस्या के जिस पक्ष या अंग पर शोध नहीं किया गया उस पक्ष को अपने शोध अध्ययन में सम्मिलित कर सकता है। इस प्रकार शोधकर्ता अपने से पहले की अनुसंधानकर्ताओं से सीख कर अपने बाद आने वाले के लिए बीच की कड़ी बनता है।

1.9 अध्ययन विधि

इस शोध को पूरा करने में दार्शनिक विधि का प्रयोग किया गया जिसमें से निम्न हैं - शोध प्रक्रिया में शोध की विधि अत्यंत महत्वपूर्ण होती है शोध समस्या के निराकरण के लिये अपनाये जाने वाले विविध चरणों को विधि वर्णित करती है विभिन्न विद्वानों ने शोध विधियों का वर्गीकरण विभिन्न दृष्टिकोण से किया है।

जॉन डब्ल्यू बेस्ट के अनुसार शोध विधि

- वर्णनात्मक विधि
- ऐतिहासिक विधि
- दार्शनिक विधि

व्हिटनी के अनुसार शोध विधि

- वर्णनात्मक विधि

- ऐतिहासिक विधि
- दार्शनिक विधि
- प्रयोगात्मक विधि
- फलानुभव विधि
- सामाजिक विधि
- रचनात्मक विधि
- पाठ्यक्रम विधि

प्रस्तुत शोध दार्शनिक शोध है। इस शोध में विषय वस्तु विश्लेषण विधि का प्रयोग किया जाता है। विश्ववस्तु विश्लेषण विधि निश्चित रूप से परिमाणात्मक विश्लेषण है। यह विधि शोध की प्रक्रिया एवं प्रविधि दोनों में प्रयुक्त होती है।

विषयवस्तु के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कैपलिन ने कहा है—

"विषयवस्तु विश्लेषण एक विशेष सप्रेक्षण के अन्तर्गत निहित आशयों का क्रमबद्ध तथा मात्रात्मक रूप से विवेचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास करता है।

वैलेस तथा बेरिसन ने विषय वस्तु की परिभाषा को अधिक विस्तृत करते हुये लिखा है—

क्रमबद्ध विषयवस्तु विश्लेषण अधिकतर संयोग रूप से प्राप्त सामग्री के विवरणों को ऐसा विशिष्ट रूप प्रदान करने का प्रयास करता है। जिससे पाठक अथवा श्रोता के प्रति दिये गये, उद्दीपकों की प्रकृति तथा सापेक्षित शक्ति को वस्तु परक आधार पर प्रस्तुत किया जा सके

विषय वस्तु विश्लेषण निम्न तीन प्रकार से किया जाता है—

1) शाब्दिक विश्लेषण-

विषयवस्तु विश्लेषण विधि अधिकांशतः सामान्य शब्दों और शीघ्रता से समझ आने वाले शब्दों की पहचान करता है शाब्दिक विश्लेषण में बच्चों के लेखों का संग्रह सामाजिक अक्षर या शब्द और बच्चे या वृद्ध के सामान्य स्थिति में शब्दों के प्रयोग के अन्य प्रतिमान निहित हैं।

2) प्रमाण सम्बन्धी विश्लेषण-

इस विश्लेषण में शोधकर्ता सहायक लिखित सामग्री का चयन करता है। वह सहायक ग्रन्थों में प्रस्तुत किये विचारों समीक्षाओं का अध्ययन करता है व प्रमाण प्राप्त करना चाहता है।

3) परिमाणात्मक विद्वेषण-

इसमें विभिन्न अभिलेख और अधिसूचनायें अन्य प्रकार के प्रतिमानों द्वारा प्रस्तुत किये जाते विषयवस्तु विद्वेषण विधि का औचित्य विषयवस्तु विश्लेषण विधि पहले से विद्यमान ग्रन्थों के विश्लेषण और संश्लेषण से सम्बन्धित शिक्षा के निम्नलिखित क्षेत्रों में उपयोगी है।

- यह विधि निश्चित रूप से आगामी क्रियाओं के सुधार के लिये उपयोगी है।

- यह विधि प्रमाण सम्बन्धी ऐतिहासिक शोध की भाँति सामग्री एवं लेखों से सम्बन्धित होती है। अतः इसे प्रयोग करना सरल है।
- यह विधि उपलब्ध तथ्य एवं मापन इस प्रकार के अध्ययनों को अधिक मौलिक दृष्टिकोण व तथ्यों की खोज की ओर अग्रसर करती है।

1.10 शोध अध्ययन के स्रोत

स्रोत दो प्रकार के होते हैं—

I. प्राथमिक स्रोत

वह सामग्री जिसे अनुसन्धानकर्ता स्वयं अपने प्रयोग अथवा खोज द्वारा प्राप्त करता है इसे प्राथमिक सामग्री कहते हैं। इस सामग्री को पहली बार प्राप्त किया गया है।

II. द्वितीयक स्रोत

यह सामग्री जिसे अनुसंधानकर्ता दूसरों के प्रयोग अथवा अनुसंधान से प्राप्त कर लेता है। यह सामग्री स्वयं अनुसंधानकर्ता द्वारा नहीं प्राप्त की गयीं अपितु अन्य स्रोतों से प्राप्त हुई है। इसी कारण इसे द्वितीयक सामग्री कहते हैं। इस प्रकार के आंकड़ों का एक बार सांख्यिकीय विश्लेषण हो चुका है। और उससे कुछ निष्कर्ष निकाले जा चुके है। जब अन्य अनुसंधानकर्ता इसी आंकड़े को अपने अनुसंधान के लिये प्रयोग में लाता है तो वह उसकी मौलिक सामग्री नहीं होती है।

प्रस्तुत शोध में शोधार्थी ने प्राथमिक स्रोत एवं द्वितीयक स्रोत दोनों का प्रयोग किया है। जिसमें प्राथमिक स्रोत में साक्षात्कार तथा स्वयं आचार्य प्रशांत की लिखी कृतियों का प्रयोग किया है तथा द्वितीयक स्रोत में कुछ पुस्तकें जैसे- विद्यार्थी जीवन पढ़ाई और मौज एवं कुछ सामग्री इंटरनेट से ली गयी है|

1.11 अध्ययन का परिसीमांकन

किसी भी शोध में साधन, शक्ति और समय सीमित होने के कारण समस्या के सभी पक्षों का गहन अध्ययन करना कठिन होता है। इसलिए सम्बंधित विषयवस्तु का परिसीमन करना आवश्यक हो जाता है। परिसीमन से शोध समस्या को सीमा में रखकर देखने से है आचार्य प्रशान्त जी की साहित्यक यात्रा बिंदु से सिंधु की ओर रही है जिसमें विभिन्न पक्ष समाहित है | अतः शोधकर्ता ने उनके प्रसिद्ध पुस्तक को अध्ययन हेतु विद्यार्थी जीवन पढ़ाई और मौज, एवम् वीडियो कैसेट सीडी आदि को सुनकर अध्ययन किया तो पता चला की आचार्य प्रशान्त जी के शैक्षिक योगदान इन संसाधनों में समाविष्ट हैं।

1.12 अध्ययन का महत्व एवम् सार्थकता

मन्ये विधात्रा जगदेक काननम्

विनिर्मित वर्षमिदं सुशोभनम्

धर्मात्पाणि क्रियन्ति यत्र वै

कैवल्यरूप च फल प्रचीयते।

मनुष्य को सुखमय जीवन व्यतीत करने के लिए कर्म करने की आवश्यकता पड़ती है। कर्मप्रधान व्यक्ति ही जीवन में वास्तविक सुख का आनंद प्राप्त कर सकता है। अकर्मण्यता मनुष्य को निराश और भाग्यवादी बनाती है।

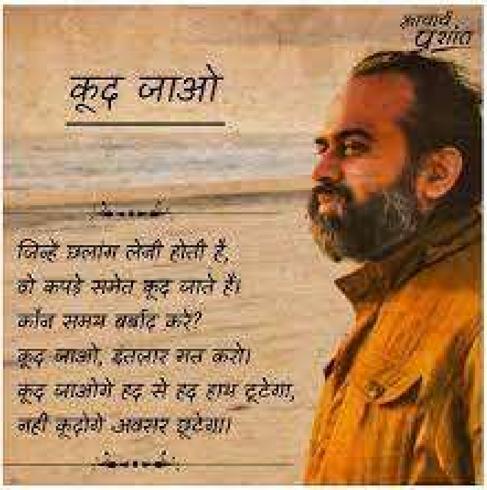
मनुष्य के कर्म अनेक प्रकार के होते हैं। कुछ कर्म तो वह अनिच्छापूर्वक बाध्यता के साथ करता है परंतु मनोयोग से किया गया कृत्य ही उसे सच्चा आनंद प्राप्त कराता है। इन समस्त क्रियाओं में अध्ययन सर्वश्रेष्ठ है। अध्ययन प्रिय व्यक्ति स्वयं को सदैव प्रसन्नचित्त अनुभव करता है।

अध्ययन में मनुष्य की अभिरुचि सदैव उसे उत्थान की ओर ले जाती है। अध्ययन की महिमा अनंत है। किसी भी राष्ट्र अथवा देश के नागरिक जितना ही अध्ययन को महत्व देगें| वह राष्ट्र उतना ही प्रगतिशील होगा। समस्त विकसित देश विकासशील देशों से इसलिए अग्रणी है क्योंकि उन्होंने प्रारंभ से ही अध्ययन को महत्व दिया। शिक्षा का उनका स्तर हमारी तुलना में कहीं अधिक ऊँचा है। अतः राष्ट्र का विकास तभी संभव है जब देश में अध्ययन को महत्व दिया जाएगा|

द्वितीय अध्याय

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण

- ❖ प्रस्तावना
- ❖ शैक्षिक योगदान से सम्बन्धित कतिपय शोध अध्ययन
- ❖ समीक्षात्मक निष्कर्ष



द्वितीय अध्याय

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण

2.1 प्रस्तावना

किसी भी विषय पर शोध करने से पूर्व उस विषय से सम्बन्धित साहित्यिक पुनरावलोकन अति आवश्यक है। साहित्यिक पुनरावलोकन कर लेने से शोध कार्य में काफी सरलता आ जाती है और शोधकर्ता को छोटे-छोटे बिन्दुओं पर विचार करना आवश्यक हो जाता है। शोधार्थी साहित्य का पुनरावलोकन करते समय यह ध्यान रखें जिसमें कि उसका शोध विषय परिपूर्ण हो जाये। जिस विषय पर वर्तमान में शोध हुए है उनका अध्ययन कर लेना चाहिए क्योंकि वे वर्तमान अध्ययन पर काफी प्रकाश डालते है और कार्य को अग्रसर करने के लिए दिशा निर्देश दे सकते हैं।

साहित्य सर्वेक्षण से तात्पर्य इस समस्या से सम्बन्धित पुस्तकों, शोधपत्रों, पत्र-पत्रिकाओं, ज्ञान कोषों, प्रकाशित शोध-प्रबन्धों, अभिलेखों, प्रतिवेदनों आदि का अध्ययन कर लेने से है।

जॉन डब्लू वेस्ट के अनुसार, "व्यवहारिक दृष्टि से सारा मानव ज्ञान पुस्तकों एवं पुस्तकालयों से प्राप्त किया जा सकता है। अन्य जीवों के अतिरिक्त जो प्रत्येक पीढ़ी में नये सिरे से प्रारम्भ करते हैं, मानव समाज अपने प्राचीन अनुभवों को संगृहीत एवं सुरक्षित रखता है। ज्ञान के अथाह भण्डार में मानव का निरन्तर भोग सभी क्षेत्रों में उसके विकास का आधार है।"प्रस्तुत शोध अध्ययन की पृष्ठभूमि तथा परिप्रेक्ष्य से सम्बन्धित साहित्य की खोज करना आवश्यक है।

वर्तमान शोध के परिप्रेक्ष्य में यह बात कर लेना आवश्यक है कि इस क्षेत्र में कितने शोध हो चुके हैं तथा समान प्रकार के शोध अध्ययनों में से किस प्रकार के उद्देश्य निश्चित किये गये हैं।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कौन सी शोध प्रविधि का प्रयोग किया गया है। इसके साथ ही मालूम करना आवश्यक है कि इस प्रकार के पूर्व में किये गये अध्ययनों के क्या परिणाम रहे? तथा उनके मुख्य निष्कर्ष क्या प्राप्त हुए? इस प्रकार से सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन करने के उपरांत वर्तमान शोध अध्ययन हेतु उद्देश्य शोध विधि का चयन करना सुविधाजनक हो जाता है क्योंकि जब शोधार्थी दूसरे शोधकर्ताओं के अनुसंधान कार्य का अध्ययन करता है तो उसे बहुत से अनुसंधान विधियों, बहुत से तथ्यों, सिद्धान्तों संरचनाओं एवं संदर्भ ग्रंथों का ज्ञान होता है, जो इसके अपने अनुसंधान में उपयोगी सिद्ध होते है। सर्वेक्षण द्वारा बहुत से अनुसंधान प्रतिवेदनों की अच्छाईयों एवं कमियों को जान लेने के बाद इस बात की संभावना बहुत कम हो जाती है कि वह स्वयं एक निम्न स्तरीय अनुसंधान करेगा अथवा अनुसंधान प्रक्रिया संबंधी उन गलतीयों को पुनरावृत्ति करेगा, जो उसके पूर्ववर्ती शोधकर्ता कर चुके हैं।

2.2 शैक्षिक योगदान से सम्बन्धित कतिपय शोध

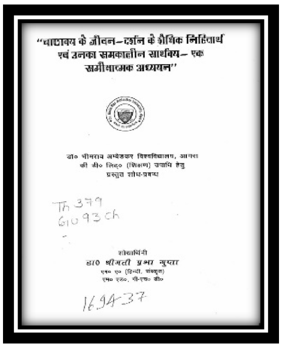


शोधार्थी द्वारा शैक्षिक योगदान से सम्बन्धित पूर्ववर्ती शोध कार्यों का अध्ययन किया गया जिसका विवरण निम्नलिखित है—

1. राघवेंद्र शुक्ल (2009) ने डॉ० (श्रीमती) एनीबेसेण्ट के शिक्षा दर्शन का वर्तमान भारतीय शैक्षिक परिदृश्य में प्रासंगिकता का अध्ययन किया | इनके अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे भारत के शाश्वत प्रकाश स्तम्भों में डॉ. (श्रीमती) एनी बेसेन्ट की श्रेष्ठता निर्विवाद है। समय-समय पर देश की परिस्थितियों को सुधारने के प्रयत्न किये गये। 19वीं और 20वीं शताब्दी में भारत के ज्ञानात्मक उत्थान एवं राजनैतिक परिवर्तनों के लिए देशी एवं विदेशी महापुरुषों एवं महती स्त्रियों ने अपने अथक प्रयत्न किये है।

श्रीमती एनी बेसेन्ट के अनुसार वास्तविक, जीवनी एवं सच्ची शिक्षा वह है जो बालकों की सुषुप्त शक्तियों को उजागर करे। व्यष्टि एवं समविष्ट की संकीर्ण सीमा से निकाल कर बालक को मानवतावादी एवं समग्रवादी बनाना है, विकास की प्रक्रिया में मनुष्य ने आत्मा, मस्तिष्क एवं विवेक की शक्तियों तथा 'स्व' का विकास कर लिया है. शिक्षा को मानव आत्मा की माँगों की पूर्ति करनी चाहिए। उन्होंने अपने समय में दी जाने वाली शिक्षा को निरर्थक, अपूर्ण अराष्ट्रीय एवं आत्मीय चरित्र तथा मन के पूर्ण विकास में बाधक पाया। इसलिए इन्होंने समन्वित रचनात्मक दर्शन के आधार पर एक नवीन शैक्षिक विचारधारा का प्रतिपादन किया, जिसमें आदर्शवाद एवं यथार्थवाद का सुन्दर समन्वय है। उनका शिक्षा दर्शन उनके जीवन-दर्शन का ही प्रतिफल है।

2. डॉ० श्रीमती प्रभा गुप्ता ने " चाणाक्य के जीवन-दर्शन के शैक्षिक निहितार्थ एवं उनका समकालीन सार्थक्य - एक समीक्षात्मक अध्ययन"नमक शीर्षक पर शोध कार्य किया | इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि शिक्षा चाहे वह देशी हो या विदेशी भारतीय हो या अंग्रेजी मानव जीवन की सामान्य प्र क्रिया है। व्यक्ति को पशुता से ऊपर उठाकर मानव बनाने असुन्दरता से सुन्दरता, अकल्याण से कल्याण, असत्य से सत्य की ओर ले जाने की प्रेरणा तथा क्षमता प्रदान करती है। शैक्षिक जीवन का प्रत्येक क्षण, उसकी प्रत्येक प्रवृत्ति समस्त योजनाएँ विधियों और व्यवस्थाएँ एक ही लक्ष्य की ओर उन्मुख रहती हैं। विभिन्न देशों और समाजों के सदस्य अपनी अपनी आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा से विशेष अपेक्षाएँ रखते हैं। उनके जीवन की जो माँगे होती हैं उनकी जो प्रचलित मर्यादाएँ परम्पराएँ तथा आदर्श होते हैं उनकी पूर्ति की आशा वे शिक्षा से रखते हैं। तदनकूल भारतवासी भी भारतीय शिक्षा से कुछ आशाएँ. रखते हैं। भारत एक प्राचीन एवं महान देश है उसका बहुत पुराना इतिहास और संस्कृति है इसकी अपनी विविधताएँ एवं विशिष्टताएँ है वर्तमान काल में विभिन्न राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक एवं शैक्षिक समस्याएं है जिनका निराकरण शिक्षा द्वारा ही सम्भव है। यह भी सत्य है कि अच्छी शिक्षा की व्यवस्था एक दार्शनिक ही कर सकता है यही विचार थे चाणक्य के "एक शिक्षक के मन में क्या हो सकता है? उस राष्ट्र की मुक्ति और उत्कर्ष में शिक्षक की भूमिका है|


"चाणाक्य के जीवन–दर्शन के शैक्षिक निहितार्थ एवं उनका समकालीन सार्थक्य– एक समीक्षात्मक अध्ययन"

डॉ० भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा की डी० लिट० (शिक्षण) उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध

Th 379
G1093 Ch

शोधार्थिनी
डा० श्रीमती प्रभा गुप्ता
एम० ए० (हिन्दी, संस्कृत)
एम० एड०, पी-एच० डी०

169437

3. अजीत कुमार (2011) ने शंकराचार्य के दर्शन में निहित शैक्षिक मूल्यों एवं विचारों का वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता का अध्ययन किया इनके अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे श्री शंकराचार्य ने अपने आध्यात्मिक मूल्यों के अन्तर्गत ब्रह्म सत्य जगत, माया, ईश्वर, आत्मा, मोक्ष, ज्ञान, अन्तःकरण की शुद्धि, लोक संग्रहार्थ एवं निष्काम भाव कर्म, साधन चतुष्टय, उपासना, अष्टांग योग, प्रारब्ध, पुनर्जन्म आदि को स्थान दिया है। इन मूल्यों की शिक्षा द्वारा व्यक्ति में लौकिक एवं पारलौकिक जीवन के विकास के लिए प्रेरणा उत्पन्न करने पर बल दिया गया है जो कि अखण्ड व्यक्तित्व के नियामक हैं।


"शंकराचार्य के दर्शन में निहित शैक्षिक मूल्यों एवं विचारों का वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता"

3507

डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद से शिक्षाशास्त्र विषय में पी–एच०डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–प्रबन्ध
2011

शोध निर्देशक
डॉ० हवलदार सिंह यादव

शोधकर्ता
अजीत कुमार

शिक्षक–शिक्षा विभाग
मदनमोहन मालवीय पी०जी० कालेज, कालाकाँकर, प्रतापगढ़ (उ०प्र०)

वर्तमान समय में जिन मूल्यों को महत्त्वपूर्ण माना जा रहा है वे वस्तुतः व्यक्ति के एकांगी (भौतिक) विकास से ही घनिष्ट रूप से सम्बन्धित हैं और उपरोक्त मूल्यों का सर्वथा अभाव दिखाई पड़ रहा है जिस कारण व्यक्ति आध्यात्मिक रूप से पक्षाघात एवं पाण्डुता का शिकार हो गया है। व्यक्ति में स्वार्थ अहंकार हिंसा की सबलता ने सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षिक व्यवस्था के साथ-साथ परमार्थ को उपेक्षित कर दिया है। अतएव शंकर द्वारा निरूपित आध्यात्मिक शैक्षिक मूल्यों को वर्तमान शिक्षा में स्थान देने की आवश्यकता है जिससे व्यक्ति का पूर्ण विकास हो सके।

4. वीरेन्द्र कुमार (2021) ने टैगोर एवं रसेल के शैक्षिक दर्शन की वर्तमान में प्रासंगिकता का अध्ययन किया इनके अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे टैगोर तीन प्रकार की स्वतंत्रता की वकालत करते हैं विद्यार्थियों को कार्य करने की स्वतंत्रता और सोचने की स्वतंत्रता और अपनी भावनाओं को व्यक्त करने की स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। इससे कवि का

तात्पर्य पूर्ण स्वतंत्रता या शिष्य की पसंद के अनुसार कार्य करने का लाइसेंस नहीं था। वास्तव में उन्हें स्वतंत्रता की ऐसी अवधारणा, नकारात्मक पहलू में ली गई स्वतंत्रता पसंद नहीं थी कवि ने लिखा है कि "स्वतंत्रता 1 मात्र स्वतन्त्रता के अर्थ में अर्थहीन है। पूर्ण स्वतंत्रता संबंधों के सामंजस्य में निहित है। टैगोर ने पूर्ण स्वतंत्रता को माया माना और यह कोई स्वतंत्रता (सत्यम) नहीं है। टैगोर ने इच्छा की स्वतंत्रता का हवाला देते हुए इस विचार को स्पष्ट किया। उन्होंने लिखा हमारे पास अपनी इच्छा की स्वतंत्रता है जो अन्य इच्छाओं की स्वतंत्रता में ही अपना वास्तविक सामंजस्य पा सकती है-


टैगोर एवं रसेल के शैक्षिक दर्शन की वर्तमान में प्रासंगिकता

शोध–प्रबन्ध

2021

शोध केन्द्र

येषां न विदया न तपो न दानं

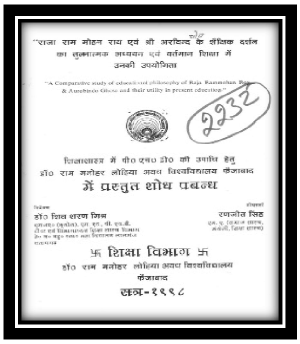
जानं न शील न गुणो न धर्मः ।

ते मर्त्यलोके भुविभारभूता

मनुष्यरूपेण मृगाश्चरन्ति ॥

सुभाषित की यह उक्ति विद्या के अमूल्य महत्त्व को इंगित करती है, जिसके अनुसार शिक्षाविहीन मनुष्य इस मृत्युलोक में धरती पर भार स्वरूप पशु के समान है। अनादि काल से शिक्षा अनवरत क्रम में व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास की प्रक्रिया है शिक्षा के विभिन्न पहलुओं के अध्ययन हेतु शिक्षा को विभिन्न स्तरों में विभाजित किया गया है।

5. रणजीत सिंह (1998) ने राजा राम मोहन राय एवं श्री अरविन्द के शैक्षिक दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में उनकी उपयोगिता का अध्ययन किया इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि विश्व के सबसे बड़े लोकतांरिक देश भारत में आज लोकतं स्वयं छटपटा रहा है जो बड़ी लज्जा की बात है राजा राम मोहन राय ने अस्पृश्यता, जात-पाँत क्षेत्रवाद, भाषावाद, धर्मवाद, कुप्रथा, अंधविश्वास आदि को मिटाने के लिए जब संघर्ष शुरू किया तो उन्हें उनके ही माता-पिता द्वारा घर से निकाल दिया गया, समाज ने प्रताड़ित किया, समुद्र पार करने में प्रथम भारतीय होने के कारण उन्हें पापी घोषित किया गया परन्तु राष्ट्रीयता का यह पुजारी राष्ट्रव समाज के कल्याण के लिए आजीवन संघर्ष करता रहा यह जन-जन में लोकतांभिक गुणों का विकास करना चाहते थे परन्तु बाज को शिक्षा में लोकतांत्रिक गुणों की सार्थकता सत्ता प्राप्त कर लेने में मानी जाती है। यह कारण है कि जातिवाद, साम्प्रदायिकता, धार्मिक संकीर्णता, क्षेत्रवाद के चलते लोकतंत्र स्वयं छटपटा रहा है मेरा अभिमत है कि राजा राम मोहन राय का मानवतावादबाज ने केवल राष्ट्र की एकता, अखण्डता एवं समृद्धि में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हो सकता है बल्कि यह लोकतंत्र की नहीं को अविनाशी एवं स्थूल बना सकता है।


"राजा राम मोहन राय एवं श्री अरविन्द के शैक्षिक दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा में उनकी उपयोगिता

में प्रस्तुत शोध प्रबन्ध

रणजीत सिंह

शिक्षा विभाग

डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय

फैजाबाद

सत्र-१९९८

6. संजय (2005) ने संत रविदास का शिक्षा दर्शन एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसकी प्रासंगिकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन किया इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि संत रविदास के अपने सामाजिक विचारों में सर्वप्रथम देन "मानव समानता का विचार है वे मानव-मानव में ऊँच-नीच जाति-पांति, भेद-भाव एवं विद्वेष भावना को देखते हुए सर्व साधारण को 'मानव एकता का पाठ पढ़ाया। साथ ही उन्होंने इसके लिए सदाचारी जीवन एवं नैतिकता का संदेश देकर समाज को मजबूत करने का कार्य किया। वे भोगवाद, इन्द्रिय असंयम एवं धन लिप्सा को दुःख का कारण बताते हुए सत्य, सन्तोष, सदाचार, नैतिक मूल्य एवं वचन का पालन पर बल दिये वे जीविकोपार्जन हेतु 'श्रम साधना' के महत्व को बढ़ाया और परजीवी जीवन की घोर निन्दा किये। वे श्रम को ही सुख-शान्ति का अद्वितीय एवं सरल


"संत रविदास का शिक्षा-दर्शन एवं वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उसकी प्रासंगिकता का विश्लेषणात्मक अध्ययन"

वीर बहादुर सिंह पूर्वाञ्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर की पी-एच०डी० (शिक्षा शास्त्र) उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध-प्रबन्ध

शोधकर्ता : संजय

शोध केन्द्र

शिक्षा संकाय

2005

साधन स्वीकार करते हुए अपने को दिखाया वे साधना का मूलमंत्र लोक कल्याण को मानते हैं अतः इनका सामाजिक विचार कल्याण एवं प्रेम की भावना पर आधारित है और उन्होंने नेक कमाई से इच्छाओं की पूर्ति पर बल दिया।

संत रविदास जी ने अपने आध्यमिक विचारों में निर्गुण ब्रम्ह ही उपासना की महत्ता को बताते हुए वे अपने ब्रम्ह को अगम अगोचर, अलख – निरंजन, निराकार, निश्चल, आदि शब्दों से विभूषित किये है वे कहते है कि सबका सृजन कर्ता एक है और वही सत्य है, वे इस परम सत्ता को विराट रूप में देखते है इस परम सत्ता की प्राप्ति के लिए वे आत्म चिन्तन को महत्व प्रदान करते है वे कहते हैं कि ज्ञान के द्वारा ब्रह्म प्राप्ति के सुख का अनुभव किया जा सकता है वे आत्मा को ज्ञान का स्वरूप मानते है इस लिए आत्मा और ब्रम्हा में कोई अन्तर नही है माया के स्वरूप की चर्चा करते हुए सत रविदास जी ने कहते है कि जीव इस माया के इस भ्रम जाल में फँस कर ब्रम्हा को भूल जाता है जिससे उसे लोभ लालच ममता आदि घेर लेती है। जिसके कारण उसे कुछ दिखाई नही देता ने सगुण माया को नाशवान मानते है तथा निर्गुण ब्रम्हा को आदि एवं अंत मानते है संत रविदास अपने इष्ट के लिए अनेक अधिमानों से अपने इष्ट को संबोधित किया है

7. अंकुर कुमार (2016) ने गाँधी का शिक्षा दर्शन और शिक्षा का अधिकार अधिनियम एक तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन किया इनके अध्ययन के निष्कर्ष इस प्रकार रहे | जहाँ तक शिक्षा की बात है, शिक्षा इंसान की कैमिस्ट्री को बदल देती है। जीवन तो कुदरत से मिल जाता है, पर जीवन जीने का सलीका शिक्षा देती है। यह हमारा दुर्भाग्य रहा है कि आज तक शिक्षा सबके लिए समान स्तर पर उपलब्ध नहीं रही। इसका व्यापक जनहित में उपयोग नहीं हो पाया विशेषाधिकार के तौर पर दुरूपयोग ज्यादा किया गया। ऐसे में शिक्षा का यह बुनियादी अधिकार हमारी विकास यात्रों में एक मील का पत्थर साबित हो सकता है।


गाँधी का शिक्षा दर्शन और शिक्षा का अधिकार अधिनियम : एक तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन

पटना विश्वविद्यालय, पटना
के
मानविकी संकाय (दर्शनशास्त्र)
में
पी-एच०डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध-प्रबन्ध
2016

शोध-पर्यवेक्षक — शोधार्थी
अंकुर कुमार

आजादी के इतने वर्षों के बाद भी हम आज तक यह तय नहीं कर पा रहे हैं कि देश के नौनिहालों को कैसे और कैसी शिक्षा दें। असल में, आज भी हम हजारों रुपए खर्च करके जो शिक्षा अपने बच्चों को मुहैया करा पा रहे हैं, वह उन्हें बस्तों के बोझ के अलावा क्या सिखा पाती है। हम बच्चों को जिस व्यवस्था में स्कूल में डालते हैं, उसमें वह पहले दिन से अमीर-गरीब को पहचानने लगता है। इसके कारण जो दम्भ उसके मन में पैदा होता है, वह उसे नैतिकता की किसी भी परिभाषा में फिट नहीं बैठने देता। क्या हमारे नेतागण इसके बारे में भी कोई रास्ता तलाश रहे हैं ?

8. वन्दना गोंड (2022) ने ज्योतिबा फुले और भीमराव अम्बेडकर के शिक्षा दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन किया | उन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि ज्योतिबा फुले और भीमराव अम्बेडकर जी के शैक्षिक विचारों में समानता है क्योंकि जहां ज्योतिबा फुले ने सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान शिक्षा के माध्यम से स्वीकार किया वहीं भीमराव अम्बेडकर जी ने भी शिक्षा को हथियार के रूप में स्वीकार करते हुए कहा कि शिक्षा से ही आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक क्षेत्र में बदलाव हो सकते है जिसके परिणामस्वरूप मानवता, भाईचारा व सहयोग, सहृदयता, करुणा के भाव से आपसी वैमनष्यता के भाव धीरे-धीरे प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च्य स्तर तक कठिन प्रयासों से समाप्त किये जा सकते हैं ज्योतिबा फुले और भीमराव अम्बेडकर के द्वारा दिए गए उपरोक्त नवीन सुझाव को राष्ट्रीय शिक्षा प्रणाली में शामिल किया जा सकता है।


ज्योतिबा फुले और भीमराव अम्बेडकर के शिक्षा दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन

शोध-प्रबन्ध
2022

शोध निर्देशक — शोधकर्त्री
वन्दना गौंड

शिक्षाशास्त्र विभाग

फुले और भीमराव अम्बेडकर के शिक्षा सम्बन्धी उद्देश्यों का आधार रूढ़ीगत एवं परम्परावादी विचारधारा से मुक्त होकर वैज्ञानिक व तर्कपूर्ण चिंतन को बढ़ावा देना था। इन विचारों को आधार मानते हुए उनके विचारों को शिक्षा प्रणाली में शामिल करने से सामाजिक समरसता को बढ़ावा दिया जा सकता है।

अध्यापक के विषय में ज्योतिबा फुले का कहना था कि शिक्षक अध्यापन प्रशिक्षण उत्तीर्ण हो तथा अध्यापक का चुनाव प्रत्येक वर्ग से हो अम्बेडकर जी ने भी शिक्षक के सम्बन्ध में अपना विचार देते हुए कहा कि शिक्षक को त्यागपूर्ण आचरण, प्रेम, सहयोग तथा भेदभाव रहित होना चाहिए। प्रत्येक स्तर पर विद्यार्थियों का उचित मार्गदर्शन करना ही शिक्षक का कर्तव्य होना चाहिए।

9. चन्द्रभूषण पाण्डेय (2002) ने स्वामी दयानन्द सरस्वती के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान सन्दर्भ में समालोचनात्मक अध्ययन किया | इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि पाश्चात्य शिक्षाशास्त्री प्लेटो की तरह स्वामी दयानन्द सरस्वती भी शिक्षा व्यवस्था का उत्तरदायित्व राज्य पर सौंपते हैं। लेकिन वे शिक्षा के आन्तरिक क्षेत्र में राज्य का नियंत्रण कदापि नहीं चाहते थे अपितु शिक्षा की स्वायत्ता में आस्था तथा विश्वास रखते थे राज्य का कर्तव्य शिक्षा की व्यवस्था का अनुरक्षण तथा नियमन करना था ताकि कोई भी भारत का बालिका या बालक विद्यालय जाने से वंचित न रह जाय। स्वामी जी ने लिखा है, "इसमें राजनियम तथा जाति नियम होना चाहिए कि पांचवे अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के और लड़कियों को घर में न रख सकें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें जो न भेजे वह दंडित हो।

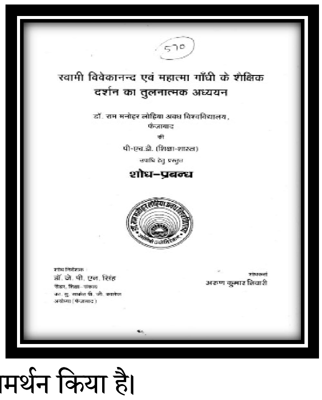

स्वामी दयानन्द सरस्वती के शैक्षिक-दर्शन का
वर्तमान सन्दर्भ में समालोचनात्मक अध्ययन
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर के शिक्षाशास्त्र
विषय में पी- एच0 डी0 उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध-प्रबन्ध
सत्र - 2002
निर्देशक : डॉ0 जय प्रकाश सिंह
शोधकर्ता : चन्द्रभूषण पाण्डेय
शिक्षा-संकाय
तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर (उ0 प्र0)
सम्बद्ध
वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ0 प्र0)
सम्वत् - 2059

स्वामी जी राज्य का कर्तव्य मानते हैं कि प्रत्येक बालक तथा बालिका को शिक्षा प्रदान करने तथा प्राप्त करने का अवसर अनिवार्यता के साथ प्रतिबंधित हो तथा सावधानी बरतें कि समावर्तन संस्कार के पहले तक विवाह न होने पाये। यह तथ्य स्वामी जी के निम्नलिखित मन्तव्य से स्पष्ट हो जाता है। राजा को योग्य है कि अब कन्या और लड़कों को उक्त समय से उक्त समय तक ब्रह्मचर्य में रखकर विद्वान कराना जो कोई इस आज्ञा को न माने तो उसके माता-पिता को दण्ड देना, अर्थात्

राजा की आशा से आठ वर्ष पश्चात् लड़का और लड़की किसी के घर में न रहने पायें किन्तु आचार्य कुल में रहे जबतक समावर्तन का समय न आवे तब तक विवाह न होने पायें स्वामी जी के लिए प्रत्येक भारतीय संतान के लिए शिक्षा की अनिवार्यता राजनियम की बाध्यता से हो साथ ही जाति नियम की भी व्यवस्था स्वामी जी करते हैं जो कि वास्तविक लोकमत का प्रतीक है|

जैन दर्शन में अहिंसा एवं उदारवाद का सर्वोच्च स्थान है। भगवान ऋषभदेव ने व्यावसायिक तथा जीवनोपयोगी शिक्षा पर बल दिया। भगवान महावीर ने जैन धर्म के सुधारक के रूप में काम किया तथा शिक्षा सम्बन्धी आयाम जोड़े। इस वैज्ञानिक युग में जैन धर्म की शिक्षाओं से हमें लाभ उठाना चाहिए। जीवन के हर क्षेत्र में नैतिक शिक्षा की आवश्यकता है।

10. अरुण कुमार तिवारी ने स्वामी विवेकानन्द एवं महात्मा गाँधी के शैक्षिक दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन किया इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि स्वामी विवेकानन्द मानव में ईश्वर पूर्णता पहले से विद्यमान मानते हैं। उनके अनुसार मनुष्य लौकिक एवं पारलौकिक ज्ञान का पुंज होता है स्वामी जी का विचार है कि प्रत्येक मानव अपने मस्तिष्क में ब्रहमाण्ड का अक्षय पुस्तकालय संचित किये रहता है स्वामी जी ने जनता की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु जन शिक्षा एवं सार्वभौमिक शिक्षा पर बल दिया है तथा जन साधारण की उपेक्षा को महान राष्ट्रीय पाप माना है स्वामी जी ने स्त्रियों की दयनीय दशा को सुधारने के लिए स्त्री शिक्षा एवं प्रौढ़ शिक्षा पर विशेष बल दिया है। उन्होंने बालकों के सर्वांगीण विकास हेतु व्यावसायिक एवं औद्योगिक शिक्षा को आवश्यक बताया है। इन्होंने धार्मिक शिक्षा, राष्ट्रीय शिक्षा एवं सकारात्मक शिक्षा का समर्थन किया है।


स्वामी विवेकानन्द एवं महात्मा गाँधी के शैक्षिक
दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन
डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय,
फैजाबाद
की
पी-एच.डी. (शिक्षा-शास्त्र)
उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध-प्रबन्ध
डॉ. जे. पी. एन. सिंह
अरुण कुमार तिवारी

स्वामी जी अपने शिक्षा दर्शन के प्रचार के लिए देशों विदेशों में घूम-घूम कर उपदेश एवं व्याख्यान दिया तथा राम कृष्ण मिशन, मठों एवं आश्रमों की स्थापना की, इसके साथ ही साथ जन-जन में शिक्षा के प्रति जागरूकता जागृति किया। स्वामी

जी सच्चे वेदान्ती, शिक्षा मनीषी तथा महान दार्शनिक थे उनका शिक्षा दर्शन व्यापक एवं समन्वयवादी है उन्होंने बताया कि वर्तमान समय में दी जाने वाली शिक्षा व्यावहारिक शिक्षा नहीं है वह कुछ भी सिखाती नहीं, केवल जानकारियों का दर देती है जो आत्मसात् हुए बिना मस्तिष्क में पड़ा रहता है अतः स्वामी जी इस प्रकार की शिक्षा के पक्षधर नहीं हैं। उनके जीवन का दर्शन तथा योगपक्ष अति विशाल एवं दुरूह है। वे शिक्षा को सूचना मात्र ही नहीं, बल्कि जीवन तथा चरित्र निर्माण की कुंजी मानते हैं स्वामी जी के शैक्षिक विचारों का अवलोकन करने से स्पष्ट होता है कि इनके शैक्षिक विचार आधुनिक पीढ़ी के लिए अमूल्य रत्न है। यद्यपि स्वामी जी ने सच्चे अर्थों में एक महान वेदान्ती एवं आध्यात्मिक होने के कारण आध्यात्मिक एवं नैतिक पक्षों पर अधिक बल दिया जो कि इस भौतिक वादी युग में सम्भव नहीं है किन्तु उन्होंने जो शिक्षा दर्शन विश्व के समक्ष प्रस्तुत किया है। वह भारतीय धर्म दर्शन पर आधारित भारतीय जन जीवन के लिए अनुकूल है। यदि उनके शैक्षिक विचारों को पुर्नविचार कर संशोधित रूपों में भारतीय शिक्षा में समाहित किया जाय तो सचमुच भारत का सर्वांगीण विकास सम्भव है।

2.3 समीक्षात्मक निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्याय में शोधकर्ता के द्वारा पूर्व में किए गए कतिपय शोधों का समीक्षात्मक अध्ययन किया जिसमें डॉ० (श्रीमती) एनीबेसेण्ट के शिक्षा दर्शन, चाणाक्य के जीवन-दर्शन के शैक्षिक, शंकराचार्य के दर्शन में निहित शैक्षिक मुल्य, टैगोर एवं रसेल के शैक्षिक दर्शन, राजा राम मोहन राय एवं श्री अरविन्द के शैक्षिक दर्शन, ज्योतिबा फूले और भीमराव अंबेडकर के शिक्षा दर्शन, स्वामी विवेकानंद एवं महात्मा गाँधी के शैक्षिक दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन, संत रविदास का शिक्षा दर्शन, गाँधी का शिक्षा दर्शन एवं स्वामी दयानंद सरस्वती के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान संदर्भ में समालोचनात्मक का अध्ययन किया गया|

सम्बन्धित साहित्य के अध्ययन एवं विश्लेषण के पश्चात शोधकर्ता को प्रस्तुत समस्या "आचार्य प्रशान्त का शिक्षा के क्षेत्र में योगदान" से सम्बन्धित अध्ययन कहीं देखने को नहीं मिला। आचार्य प्रशान्त का शिक्षा के क्षेत्र में अतुलनीय योगदान है। अतः शोधार्थी द्वारा इस विषय पर लघु शोध कार्य करने का निश्चय किया गया।

तृतीय अध्याय

आचार्य प्रशान्त जी का जीवन परिचय

- ❖ प्रारंभिक जीवन
- ❖ जिज्ञासु
- ❖ प्रतिभावान
- ❖ गाँधी आश्रम
- ❖ प्रिंट मीडिया में छापे गये लेख
- ❖ प्रमुख पुस्तकें
- ❖ आचार्य प्रशान्त के अनमोल विचार

तृतीय अध्याय

आचार्य प्रशान्त जी का जीवन परिचय



प्रशांत त्रिपाठी का जन्म 1978 को महाशिवरात्रि के पावन अवसर पर उत्तर प्रदेश के आगरा शहर में हुआ था। वे तीन भाई-बहनों में सबसे बड़े हैं, उनके पिता एक प्रांतीय प्रशासनिक अधिकारी थे और माता एक गृहिणी उनका बचपन ज़्यादातर उत्तर प्रदेश में ही बीता।

3.1 प्रारंभिक जीवन



माता-पिता और शिक्षकों ने उन्हें एक ऐसा बालक पाया जो कभी शरारत करता तो कभी अचानक गहन चिंतन में डूब जाता। दोस्त भी उन्हें एक अपरिमेय स्वभाव वाला याद करते हैं, अक्सर यह सुनिश्चित नहीं होता था कि वे मज़ाक कर रहे हैं या गंभीर हैं। एक प्रतिभाशाली छात्र होने के कारण वे लगातार अपनी कक्षा में शीर्ष पायदान पर रहे और एक छात्र के लिए उच्चतम संभव प्रशंसा और पुरस्कार प्राप्त किए। उनकी माताजी को याद है कि कैसे उन्हें अपने बच्चे के बेहतर शैक्षिक प्रदर्शन के कारण कई बार 'मदर क्वीन' की उपाधि से सम्मानित किया जाता था। शिक्षक कहते हैं कि उन्होंने पहले कभी ऐसा छात्र नहीं देखा था जो मानविकी में उतना ही प्रतिभाशाली हो जितना विज्ञान में, जो भाषाओं में उतना ही निपुण हो जितना गणित में और अंग्रेजी में उतना ही कुशल जितना हिंदी में राज्य के तत्कालीन राज्यपाल ने उन्हें बोर्ड •परीक्षाओं में एक नया मानदंड स्थापित करने और एनटीएसई स्कॉलर होने के नाते एक सार्वजनिक समारोह में सम्मानित किया था।

3.2 जिज्ञासु



वे पाँच साल की उम्र से ही एक जिज्ञासु पाठक थे। उनके पिता के व्यापक गृह पुस्तकालय में उपनिषद् जैसे आध्यात्मिक ग्रंथों सहित दुनिया के कुछ बेहतरीन साहित्य शामिल थे। लंबे समय तक वे घर के किसी शांत कोने में बैठ जाते और उन किताबों में डूबे रहते जो केवल परिपक्व पुरुष ही समझ सकते थे। पढ़ने में खो जाने के कारण वे कई बार भोजन किए बिना ही सो जाते दस साल का होने से पहले ही उन्होंने पिता के पुस्तक संग्रह से लगभग सब कुछ पढ़ लिया था तथा और अधिक की माँग कर रहे थे। उनमें गहराई के शुरुआती लक्षण तब प्रकट हुए जब उन्होंने ग्यारह वर्ष की उम्र में कविताएँ रचनी शुरू कीं। उनकी कविताएँ रहस्यमयी रंगों से ओत-प्रोत थीं और ऐसे प्रश्न पूछ रही थीं जिन्हें अधिकांश वयस्क भी नहीं समझ पाते। पंद्रह वर्ष की आयु में, कई वर्षों तक लखनऊ शहर में रहने के बाद,उन्होंने अपने पिता की स्थानांतरणीय नौकरी के कारण स्वयं को दिल्ली के पास गाज़ियाबाद में पाया। बढ़ती उम्र और शहर के परिवर्तन ने उस प्रक्रिया को गति दी जो पहले से ही गहरी जड़ें जमा चुकी थी। वे रात में जागने लगे और पढ़ाई के अलावा अक्सर रात के आसमान को चुपचाप देखा करते। उनकी कविताएँ गहराई में उतरती गईं; उनमें से बहुत सी रात और चाँद को समर्पित थीं। उनका ध्यान शिक्षाविदों के बजाय रहस्यवादियों की ओर तेजी से बढ़ने लगा।

3.3 प्रतिभावान

फिर भी उन्होंने शैक्षिक रूप से अच्छा प्रदर्शन करना जारी रखा और प्रतिष्ठित भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, दिल्ली में प्रवेश प्राप्त किया। आईआईटी में उनका समय दुनिया को समझने और छात्र राजनीति में गहरी भागीदारी के बीच बीता। वे राष्ट्रव्यापी कार्यक्रमों और प्रतियोगिताओं में एक उभरते हुए डिबेटर और अभिनेता के रूप में सामने आए। वे परिसर में एक जीवंत व्यक्ति, एक भरोसेमंद छात्र नेता और मंच पर एक भावपूर्ण कलाकार थे। उन्होंने लगातार राष्ट्रीय स्तर की वाद- विवाद और भाषण प्रतियोगिताएँ जीतीं और उत्कृष्ट नाटकों में निर्देशन और अभिनय के लिए पुरस्कार भी प्राप्त किए। एक बार उन्हें एक ऐसे नाटक में अपने प्रदर्शन के लिए 'सर्वश्रेष्ठ अभिनेता' का पुरस्कार मिला जिसमें उन्होंने न तो कोई शब्द बोला था और न ही कोई कदम बढ़ाया था।



वे लंबे समय से यह महसूस कर रहे थे कि जिस नजर से अधिकांश लोग दुनिया को देखते हैं, जिस तरह से हमारे दिमाग ढर्राबद्ध हो गए हैं, उसमें मूलभूत रूप से कुछ कमी है, और इस कारण हमारे आपसी सम्बन्धों, वैश्विक संस्थाओं की संरचनाओं, समाज के कार्य करने के तरीके, मूल रूप से कहें तो हमारे जीने के ढंग में ही विकृति आ गई है। उन्होंने यह देखना शुरू कर दिया था कि मानव पीड़ा के मूल में स्पष्टता व समझ का अभाव है। वे मनुष्य की अज्ञानता, जनित हीनता, गरीबी की समस्या, उपभोग की बुराई, मनुष्य, जानवरों और पर्यावरण के प्रति हिंसा और स्वार्थ व संकीर्ण विचारधारा पर आधारित शोषण से बहुत व्यथित थे। उनका पूरा अस्तित्व ही इस विस्तीर्ण पीड़ा को चुनौती देने के लिए तैयार था, और एक युवा के तौर पर उन्हें भारतीय सिविल सेवा या प्रबंधन की राह चुनना एक सही कदम लगा।

उन्होंने उसी वर्ष भारतीय सिविल सेवा और भारतीय प्रबंधन संस्थान (आईआईएम), अहमदाबाद में प्रवेश प्राप्त किया। प्रशासनिक सेवाओं के आवंटन में उन्हें आईएएस का इच्छित पद न मिल सका, साथ ही तब तक यह भी दिखने लगा था कि प्रशासन में रहते हुए क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं लाया जा सकता, उन्होंने आईआईएम जाने का चुनाव किया।

3.4 गाँधी आश्रम

आईआईएम में उनके दो साल शैक्षणिक दृष्टि से काफी समृद्ध थे। वे ऐसे नहीं थे जो सदा रोड और प्लेसमेंट की होड़ में ही लगे रहते, जैसा कि इन प्रतिष्ठित संस्थानों में सामान्यतयः देखने को मिलता है। वे नियमित रूप से गाँधी आश्रम के पास की एक झुग्गी में संचालित एक गैर-सरकारी संगठन में बच्चों को पढ़ाते, साथ ही, इस संगठन के खर्चा को देखने के लिए स्नातकों को गणित भी पढ़ाया करते थे। इसके अलावा, मानवीय अज्ञानता पर उनका गुस्सा थिएटर के माध्यम से आकर लेता था। उन्होंने 'खामोश! अदालत जारी है', 'गैडा', 'पगला घोड़ा और '16 जनवरी की रात' जैसे नाटकों में अभिनय के साथ-साथ इनका निर्देशन भी किया। एक समय ऐसा भी आया जब उन्हें एक ही समय पर दो अलग-अलग नाटकों का निर्देशन एक साथ करना पड़ा। ये नाटक आस-पास और दूर-दराज से आए दर्शकों से खचाखच भरे आईआईएम के सभागार में हुआ करते थे। परिसर के लाभ-केंद्रित और स्वार्थप्रेरित माहौल में उन्होंने खुद को एक बाहरी व्यक्ति पाया। इन अस्तित्ववादी और विद्रोही नाटकों ने उन्हें अपनी पीड़ा को अभिव्यक्ति देने में मदद की और आगे के बड़े मंचों के लिए तैयार किया।

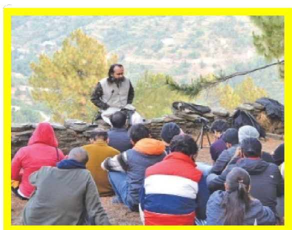


अगले कुछ वर्ष, जैसा कि वे अपने शब्दों में कहते हैं, निर्जनता में व्यतीत हुए। इस अवधि को वे एक विशेष दुःख, तड़प और तलाश के रूप में वर्णित करते हैं। शांति की तलाश में वे कॉरपोरेट जगत की नौकरियों और उद्योगों को बदलते रहे। इसी तलाश में वे समय निकालकर अक्सर शहर और काम से भी दूर चले जाया करते थे। उन्हें धीरे-धीरे यह बात स्पष्ट होने लगी थी कि वे क्या करना चाहतें हैं और वह जो उनके माध्यम से व्यक्त होने के लिए पुकार रहा था, वह किसी पारंपरिक मार्ग से प्रस्फुटित नहीं हो सकता। इस दिशा में उनका अध्ययन और संकल्प जोर पकड़ने लगा, और उन्होंने बोधग्रंथों और आध्यात्मिक साहित्य के आधार पर स्नातकोत्तरों और अनुभवी पेशेवरों के लिए एक नेतृत्व पाठ्यक्रम तैयार किया। पाठ्यक्रम कुछ प्रतिष्ठित संस्थानों में शुरू किया गया और वे कभी-कभी अपनी उम्र से बड़े छात्रों को भी पढ़ाते। कोर्स सफल रहा और उनके लिए रास्ता साफ होने लगा।

अट्ठाईस वर्ष की आयु में उन्होंने कॉरपोरेट जगत को अलविदा कह दिया और 'इंटेलीजेंट स्पिरिचुअलिटी (प्रबुद्ध आध्यात्मिकता) के माध्यम से एक नई मानवता के निर्माण' के लिए 'अद्वैत लाइफ एजुकेशन' की स्थापना की। प्रयोजन था मानव चेतना में गहरा परिवर्तन लाना। उनके प्रारंभिक श्रोता थे कॉलेज के छात्र जिन्हें आत्म-विकास पाठ्यक्रम का लाभ मिला। प्राचीन साहित्य की सीख को सरल शब्दों और मनोहर गतिविधियों के रूप में छात्रों तक पहुँचाया गया।

वैसे तो अद्वैत का काम अद्भुत था और सभी ने इसकी सराहना भी की, पर दूसरी ओर बड़ी चुनौतियों का सामना भी करना पड़ा। सामाजिक और शैक्षणिक व्यवस्थाओं ने छात्रों को केवल परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने और नौकरी की सुरक्षा हेतु डिग्री प्राप्त करने के लिए तैयार किया था। आत्म-विकास की शिक्षा, मन के पार की शिक्षा, जीवन-शिक्षा जो अद्वैत छात्रों के लिए लाने का प्रयास कर रहा था, वह इतनी नई और इतनी अलग थी कि अक्सर अद्वैत के पाठ्यक्रमों के प्रति उनका रवैया उदासीनता से भरा रहता और कभी-कभी तो आंतरिक विरोध का भी सामना करना पड़ता। अक्सर कॉलेजों का प्रबंधन निकाय और छात्रों के माता-पिता भी अद्वैत के इस साहसिक प्रयास की महत्ता और विशालता को समझने में पूरी तरह विफल हो जाते थे। हालाँकि इन तमाम मुश्किलों के बीच भी अद्वैत ने अच्छा प्रदर्शन करना जारी रखा। मिशन का विस्तार जारी रहा और आज भी यह हजारों छात्रों को स्पर्श कर रहा है और उनका जीवन बदल रहा है।

लगभग 30 वर्ष की आयु में आचार्य प्रशांत ने अपने संवाद (बोध- सत्र) में बोलना शुरू किया। ये सत्र महत्वपूर्ण जीवन मुद्दों पर खुली चर्चा के रूप में हुआ करते थे। जल्द ही यह स्पष्ट होने लगा कि ये सत्र गहन ध्यानपूर्ण थे, मन को एक अनोखी शांति दिलाते थे और मानस पर चमत्कारिक रूप से उपचारात्मक प्रभाव डालते थे। आचार्य प्रशांत के शब्दों और वीडियो को रिकॉर्ड कर इंटरनेट पर उपलब्ध कराया जाने लगा और जल्द ही उनके लेखन और उनके व्याख्यानों के प्रतिलेखन को प्रकाशित करने के लिए एक वेबसाइट भी तैयार की गई।



लगभग उसी समय उन्होंने आत्म जागरुकता शिविरों का आयोजन करना शुरू कर दिया। वे सच्चे साधकों को लगभग 30 लोगों के समूह में एक सप्ताह की अवधि के लिए अपने साथ हिमालय ले जाते। ये शिविर गहन परिवर्तनकारी घटनाएँ बन गए और शिविरों की आवृत्ति में भी बढ़ोत्तरी हुई। अपेक्षाकृत कम समय में अपार स्पष्टता और शांति प्रदान करते हुए सैकड़ों शिविर अब तक आयोजित किए जा चुके हैं।

आचार्य प्रशांत का अद्वितीय आध्यात्मिक साहित्य मानव जाति द्वारा ज्ञात उच्चतम शब्दों के बराबर है। उनकी प्रतिभा वेदांत पर आधारित है। अपनी व्यापक वेदांतिक नींव के साथ उन्हें अतीत की विभिन्न आध्यात्मिक धाराओं के संगम के रूप में देखा जाता है, फिर भी वे किसी परंपरा से सीमित नहीं हैं। वे मन पर जोरदार प्रहार करते हैं और साथ ही उसे प्रेम और करुणा से शांत भी करते हैं। एक स्पष्टता है जो उनकी उपस्थिति से निकलती है और उनके होने से एक सुकून मिलता है। उनकी शैली स्पष्टवादी, शुद्ध, रहस्यमय और करुणामय है। उनके सीधे और सरल सवालों के सामने अहंकार और मन के झूठ की छुपने की कहीं जगह नहीं मिलती थे

अपने श्रोताओं के साथ खेलते हैं उन्हें - ध्यानपूर्ण मौन की गहराई तक ले जाते हैं, हँसते हैं, मज़ाक करते हैं और समझाते हैं। एक तरफ तो वे काफी करीब प्रतीत होते हैं, वहीं दूसरी तरफ यह भी दिखता है कि उनके माध्यम से आने वाले शब्दों के स्रोत कहीं और ही हैं।

3.5 प्रिंट मीडिया में छापे गए लेख

इंटरनेट पर उनके द्वारा अपलोड किए गए 10,000 से अधिक वीडियोज़ और लेख मूल्यवान आध्यात्मिक संकलन हैं और सभी के लिए निःशुल्क उपलब्ध हैं। यह संकलन इंटरनेट पर दुनिया का सबसे बड़ा आध्यात्मिक सामग्री का भंडार है, जिनमें से 50 लाख से अधिक मिनट प्रतिदिन देखे जाते हैं। वे आईआईटी, आईआईएम और कई अन्य प्रतिष्ठित संस्थानों के साथ-साथ TED जैसे प्लेटफार्मों पर नियमित वक्ता रहे हैं। अभी हाल ही में पेंगुइन पब्लिशर द्वारा प्रकाशित उनकी पुस्तक 'कर्म' राष्ट्रीय बेस्टसेलर रही प्रिंट मीडिया में उनके लेख राष्ट्रीय दैनिक समाचार पत्रों में नियमित रूप से प्रकाशित होते रहते हैं। उनके प्रवचन और साक्षात्कार राष्ट्रीय टीवी चैनलों के माध्यम से भी प्रसारित किए जाते। हैं। आज उनके आंदोलन ने करोड़ों लोगों के जीवन को प्रभावित किया

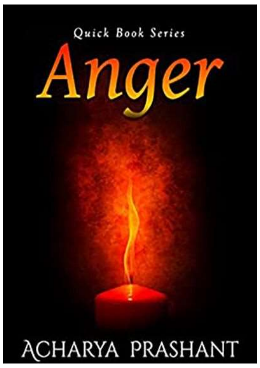

हारकर भी जीना और जीतना सीखें

है। लोगों के साथ अपने सीधे संपर्क और विभिन्न इंटरनेट आधारित चैनलों के माध्यम से सभी के लिए स्पष्टता, शांति और प्रेम लाने का उनका यह अथक प्रयास निरंतर जारी है।

3.6 प्रमुख पुस्तकें

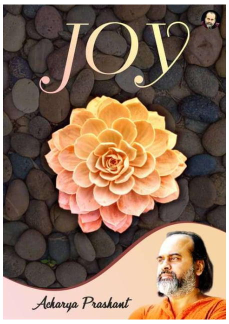
आचार्य एक बहुत ही अच्छे लेखक हैं उन्होंने बहुत सारी पुस्तकें लिखी हुई है उनकी पुस्तकें जीवन जीने का एवं आपकी सोच को बदलने में सक्षम है अमेजॉन पर इनकी पुस्तकें टॉप ट्रेंडिंग में रहती हैं आप यहां से उनकी पुस्तकों को खरीद सकते हैं आचार्य द्वारा लिखी हुई पुस्तकें निम्नलिखित हैं –

- माइलस्टोन टू सक्सेस
- द सीक्रेट ऑफ़ जॉयफुल रिलेशनशिप्स
- सेलेब्रेटिंग जीजस
- एंगर
- फियर
- द लवर यू हैव बीन मिसिंग
- आचार्य प्रशांत विथ स्टूडेंट्स
- अद्वैत इन एवरीडे लाइफ
- भागे भला न होएगा
- लव एंड लोनलिनेस
- पर्सनालिटी: द रियल हीरो विदिन
- योर हर्ट्स डीपेस्ट डिजायर
- आध्यात्मिक भ्रांतियां
- 365 डेस इन लव
- देव ड्रॉप्स ऑफ़ ग्रेस
- यू आर आलरेडी होम यू आर आलरेडी होम
- लव, स्पिरिचुआलिटी
- बुक ऑफ़ मिथ्स





- द ब्यूटीफुल हार्ट
- अ फ्लाइंग किस टू द स्काई
- द नेकेड स्काई ऑफ़ फ्रीडम
- जॉय
- गगन दमदमा बाजिया
- वर्ड्स इनटू साइलेंस
- बॉडी, इंटिमेसी एंड सेक्स



3.7 आचार्य प्रशांत के अनमोल विचार

- खुद की उम्मीद का दूसरा नाम दुख है।
- तुम जितने छोटे हो तुम्हारे सामने कोई भी उतना ही बड़ा हो जाता है।
- मौत याद रखो मौज साथ रखो।
- प्रेम पंख देता है पिंजरा नहीं।
- मन मतलब खोजना और ना पाना।
- जीवन एक रंगमंच है इसमें अपना किरदार सावधानी से निभाईये |
- सावधानी से अपने जीवन का निरीक्षण करें फिर आप सत्य को पहचान पाएंग|
- शून्यता का मतलब है खुद से मुक्त होना और जहां शून्यता है वहां परमात्मा है।
- किसी व्यक्ति को उसकी ऊँची आवाज़ से नहीं, बल्कि उसके मौन की गहराई से जानें।
- जीवन की कोई भी खोज मृत्यु के बहुत करीब जाकर शुरू होती हैं। मृत्यु को समझना जीवन को समझना है।
- इतना भी गंभीर मत बनो, कुछ भी महत्वपूर्ण नहीं है।
- जीने का मजा तब आता है जब एक बहुत उंचा मकसद तुम्हारी जिंदगी पर छा जाता है |
- अच्छा करना – बहुत दूर की बात है, जरुरी है कि पहले अच्छे हो जाओ |

चतुर्थ अध्याय

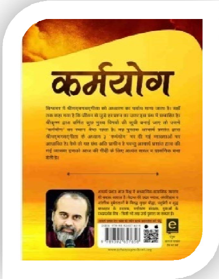
साहित्य सर्जना

- कर्म योग
- सफलता
- जात
- वेदांत
- लिखनी है नई कहानी
- स्त्री
- अकेलापन और निर्भरता
- विद्यार्थी जीवन पढ़ाई और मौज
- भारत
- ज्ञान
- रात और चांद
- पंचतन्त्र
- हिंदी

चतुर्थ अध्याय

साहित्य सर्जना

4.1 कर्मयोग



विश्वभर में श्रीमद्भगवद्गीता को अध्यात्म का पर्याय माना जाता है। यहाँ तक कहा गया है कि जीवन से जुड़े हर प्रश्न का उत्तर इस ग्रंथ में समाहित है। श्रीकृष्ण द्वारा वर्णित कुछ मुख्य विषयों की सूची बनाई जाए तो उसमें 'कर्मयोग' का स्थान श्रेष्ठ रहता है। यह पुस्तक आचार्य प्रशांत द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय ३ 'कर्मयोग' पर दी गई व्याख्याओं पर आधारित है। वैसे तो यह ग्रंथ अति प्राचीन है परन्तु आचार्य प्रशांत द्वारा की गई व्याख्या इसको आज की पीढ़ी के लिए अत्यंत सरल व प्रासंगिक बना देती है।

4.2 सफलता

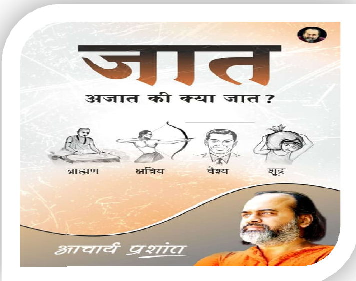


सफल होने की चाहत के पीछे, सबसे पहले, तुम्हारे मन में ये भाव बैठा होना चाहिए कि, "मैं अभी असफल हूँ"। तुम्हारे मन में ये भाव तुम्हारे मालिक बैठाते हैं।

और कौन है तुम्हारा मालिक? हर वो व्यक्ति तुम्हारा मालिक है जिसने तुम्हारे मन में ये बात भर दी है कि तुम 'हीन' हो। जिन-जिन स्रोतों से तुम्हें ये संदेश आता हो, वही वो स्रोत हैं जो तुम्हें गुलाम रखने में उत्सुक हैं, उनसे बचो। जो भी करो, मौज में करो।तुम सफल हो नहीं सकते क्योंकि तुम सफल हो

4.3 जात

जातिप्रथा एक जन्मगत भेद है व्यक्ति और व्यक्ति के बीच; जिसमें माना जाता है कि जन्म से ही एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से अलग है। यह भेद और अधिक वीभत्स रूप ले लेता है जब माना जाता है कि एक श्रेष्ठ है और दूसरा निम्न।



हम इसे मात्र एक कुरीति की तरह देखते हैं और हमारी मान्यता यही रहती है कि शिक्षा का स्तर बढ़ा देने से और इसके विरुद्ध कानून पारित कर देने से यह समस्या सुलझ जाएगी। पर ऐसा है नहीं। पढ़े-लिखे लोग भी जातिवादी मानसिकता रखते हैं, और समानता के पक्ष में कानून होने के बावजूद जातिप्रथा कायम है। तो निश्चित ही यह एक गहरी समस्या है।

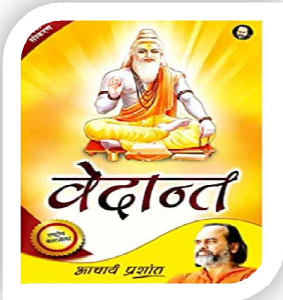
आचार्य प्रशांत प्रस्तुत पुस्तक में इस विषय को गहराई से विश्लेषित करते हैं। आचार्य प्रशांत इसे एक सामाजिक समस्या से पहले एक भीतरी समस्या बताते हैं। वे कहते हैं कि जाति हमारी अज्ञानता की उपज है; दूसरे को दूसरा समझना ही मूल समस्या है।

आचार्य प्रशांत इसके समाधान के लिए हमें उपनिषद् और वेदान्त की ओर ले चलते हैं। वे कहते हैं – चूँकि जाति शारीरिक और मानसिक तल पर ही होती है, इसलिए जाति तब तक रहेगी जब तक हम उसे मान्यता देंगे जो जन्मा है, जो जात है।

वेदान्त उसकी बात करता है जो अजात है, और मात्र उसी तल पर एकत्व है। पर उस अजात को समझा नहीं जा सकता जब तक हम जात को न समझें।

इस पुस्तक में उस जात को ही गहराई से समझाया गया है। और इस जात की समझ से ही जाति का उन्मूलन संभव है।

4.4 वेदान्त



मनुष्य को ज्ञात सबसे प्राचीन शास्त्रों में वेद शीर्ष पर आते हैं और वेदान्त वैदिक सार का परम शिखर है। शास्त्रीय रूप से उपनिषद्, ब्रह्मसूत्र और श्रीमद्भगवद्गीता वेदान्त के तीन स्तम्भ माने जाते हैं, जिनको प्रस्थानत्रयी भी कहा जाता है। वेदान्त के सूत्र मात्र दार्शनिक चिन्तन का विषय नहीं हैं, वे हमारे जीवन की बात करते हैं। चाहे हमारी व्यक्तिगत परेशानिया हों या वैश्विक समस्याएँ, वेदान्त हमें व्यक्ति और संसार के सच से परिचित करवाता है और उसका समाधान भी देता है। शताब्दियों से मनुष्य अनेक छोटे बड़े प्रश्नों को सुलझाने की कोशिश करते रहे हैं लेकिन उनमें केंद्रीय प्रश्न रहा है – 'मैं कौन हूँ?' इस मूल प्रश्न का अंतिम समाधान हमें वेदान्त में ही मिलता है। प्रत्येक व्यक्ति मुक्ति के लिए पूरा जीवन यत्न करता है लेकिन और बंधनों में ही फँसता चला जाता है। वेदान्त की शिक्षा हमें बताती है कि हमारा मूल बंधन क्या है और उससे मुक्ति का मार्ग भी प्रशस्त करती है। सिर्फ़ भारत ही नहीं, विश्व के अनेक संतों, विचारकों, कवियों, वैज्ञानिकों ने वेदान्त की महिमा को सराहा है और उससे प्रेरणा पाई है। भारत ने दुनिया को जो अमूल्य उपहार दिया है वो आत्मा है, और यह वेदान्त की ही देन है। आचार्य प्रशांत ने 'वेदान्त' में जीवन के गूढ़ रहस्य और उनसे जुडी हुई भ्रांतियों पर सरल शब्दों में विस्तृत व्याख्या की है।

4.5 लिखनी है नई कहानी ?

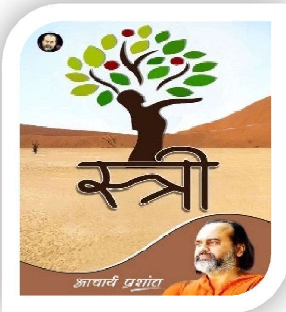
जीवनपर्यंत मन किसी नए की तलाश में रहता है। उस तलाश को वो अक्सर ही किसी नए अनुभव, घर, गाड़ी इत्यादि से पूरी करने की अभिलाषा करता है।नए की तलाश मन को अक्सर ही एक आशा में बाँध देती है कि यदि बाहर की स्थितियाँ बदल जाएँ तो भीतर की बेचैनी भी मिट जाएगी।



आचार्य प्रशांत छात्रों के साथ हुए संवादों के माध्यम से समझाते हैं कि मन की बेचैनी और ऊब बाहरी बदलावों से नहींबल्कि भीतर से आत्मस्थ होकर जाती हैं। आत्मस्थ होना ही एक नए जीवन, एक नई कहानी की नींव है। कम दिखाएँ|

4.6 स्त्री

आज़ाद जीवन एक आज़ाद मन की अभिव्यक्ति है। यदि व्यक्ति का मन मुक्त नहीं है तो मुक्ति आंदोलन शायद ही कभी अपने उद्देश्य की पूर्ति कर पाएंगे।



ऐसा ही एक आंदोलन महिला मुक्ति आंदोलन है जिसका उद्देश्य महिलाओं को राजनीतिक और सामाजिक समानता देना है, लेकिन वो भी उन मूल कारणों को संबोधित करने में असफल रहा है जो स्त्री मन की दासता का कारण बने।

स्त्री का वस्तुकरण होना ही उसकी दासता का प्रमुख कारण है। इस दासता से मुक्ति तभी सम्भव है जब स्त्री खुद को वस्तुमात्र ना समझे।

दुनिया उसका शोषण करती है उसे एक भौतिक वस्तु जानकर और स्त्री वो शोषण सहती है क्योंकि देह से उसने अपना तादात्म्य बैठा लिया है।आचार्य प्रशांत ने करुणापूर्वक शरीर का सही स्थान बताया, उसके आग्रहों का सुझाव दिया, और स्त्री के मन की मुक्ति के मार्ग पर प्रकाश डाला है।

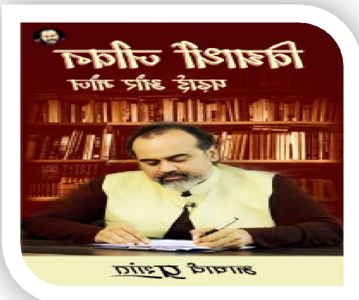
उनके शब्दों में: एक महिला वासना की वस्तु बनने से उपासना के लायक देवी के रूप में उभरती है जब वह अपनी स्त्रीत्व को छोड़ देती है। कम दिखाए

4.7 अकेलापन और निर्भरता



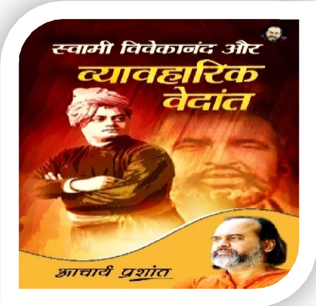
अकेलेपन का डर हमें अक्सर हमारे जीवन को अन्य वस्तुओं से भरने पर मजबूर कर देता है। वहीं से उन वस्तुओं के प्रति आसक्ति का जन्म होता है, जिसके कारण हमें जीवन में न जाने कितना दुःख भोगना पड़ता है। यदि इस डर को गहराई से समझा जाए तो जीवन सरल और बोधपूर्ण हो जाएगा। यह किताब हमें उस डर के पार ले जाने का एक प्रयास है।

4.8 विद्यार्थी जीवन पढाई और मौज



युवा, विशेष रूप से भारत में, परिवार, समाज, शिक्षा और मीडिया, कैरियर की चुनौतियों, भौतिकता, प्रेम और रिश्तों के बारे में दुविधाओं और जीवन के अर्थ और उद्देश्य के बारे में गहरे अस्तित्व संबंधी सवालों से अर्जित कंडीशनिंग से आने वाली बहु-दिशात्मक चुनौतियों का सामना करते हैं। वे नाजुक स्थिति में हैं, जहाँ उपेष्टतम निर्णय लेने और जीवन को अस्वस्थ मोड़ देने की संभावना काफी अधिक है। आचार्य प्रशांत युवाओं की ऊर्जा और संघर्ष को संबोधित करने में अद्वितीय रहे हैं। ऐसे बहुत से लोग हैं जो निर्णय लेने के महत्वपूर्ण बिंदुओं पर आजीवन स्पष्टता प्राप्त करने के लिए उनके ऋणी बने रहते हैं। यह पुस्तक उसी दिशा में एक प्रयास है। कम दिखाएँ

4.9 स्वामी विवेकानंद और व्यावहारिक वेदांत

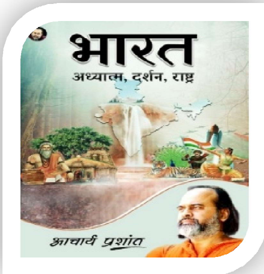


स्वामी विवेकानंद के पूर्ववर्ती ज़्यादातर अद्वैतवादी दार्शनिकों ने अपने वेदांत दर्शन में ज्ञान पक्ष को अधिक महत्व दिया है। और यह अति आवश्यक भी है। पर अपने ही ढर्रों को बचाए रखने के लिए सामान्य लोगों में यह धारणा विकसित हो गयी कि अद्वैत वेदांत केवल गूढ़ एवं तात्विक सिद्धांतों का पुंज है, जो साधारण मानवीय बुद्धि के लिए अत्यंत दुरूह है और जिसका प्रत्यक्ष जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह केवल सन्यासियों तथा चिंतनशील दार्शनिकों के लिए उपयोगी है। गृहस्थ लोगों से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह जगत से पलायन अथवा सन्यास को बढ़ावा देता है, अतः यह निषेधात्मक एवं निराशावादी दर्शन है।

जनसामान्य में व्याप्त इस आत्मघाती धारणा के निवारण हेतु स्वामी विवेकानंद जी ने वेदांत की नवीन, परिष्कृत तथा आशावादी व्याख्या प्रस्तुत करने की आवश्यकता को महसूस किया। इसीलिए उन्होंने वेदांत के आदर्शवादी पक्ष को व्यावहारिक रूप दिया तथा वेदांत दर्शन को व्यावहारिक वेदांत के रूप में प्रस्तुत किया।

4.10 भारत

स्वामी विवेकानंद के पूर्ववर्ती ज़्यादातर अद्वैतवादी दार्शनिकों ने अपने वेदांत दर्शन में ज्ञान पक्ष को अधिक महत्व दिया है। और यह अति आवश्यक भी है। पर अपने ही ढर्रों को बचाए रखने के लिए सामान्य लोगों में यह धारणा विकसित हो गयी कि अद्वैत वेदांत केवल गूढ़ एवं तात्विक सिद्धांतों का पुंज है, जो साधारण मानवीय बुद्धि के लिए अत्यंत दुरूह है और जिसका प्रत्यक्ष जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह केवल सन्यासियों तथा चिंतनशील दार्शनिकों के लिए उपयोगी है। गृहस्थ लोगों से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। यह जगत से पलायन अथवा सन्यास को बढ़ावा देता है, अतः यह निषेधात्मक एवं निराशावादी दर्शन है।



जनसामान्य में व्याप्त इस आत्मघाती धारणा के निवारण हेतु स्वामी विवेकानंद जी ने वेदांत की नवीन, परिष्कृत तथा आशावादी व्याख्या प्रस्तुत करने की आवश्यकता को महसूस किया। इसीलिए उन्होंने वेदांत के आदर्शवादी पक्ष को व्यावहारिक रूप दिया तथा वेदांत दर्शन को व्यावहारिक वेदांत के रूप में प्रस्तुत किया।

4.11 ज्ञान



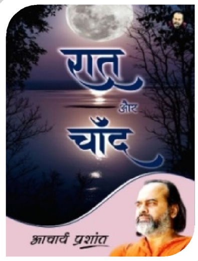
रावण की बुद्धि बड़ी तेज़ थी, उसे सारे शास्त्रों का ज्ञान था, पर परिणाम क्या मिला? दुःख, तड़प और अंत में हार। ज्ञान है किसी विषय की जानकारी और विवेक है उस जानकारी का सही उपयोग—अपने बंधनों को काटने के लिए। आप यदि ज्ञानी हैं तो इसका अर्थ ये नहीं है कि आपका जीवन सुलझा हुआ और सरल होगा।

ज्ञान मायने नहीं रखता, मायने रखता है कि आपका ज्ञान किसको नमित है।

ज्ञान तो साधन है पर साध्य क्या है, वासना की पूर्ति या शांति? रावण या राम?

यदि आपका ज्ञान आपको बोध की दिशा नहीं ले जा रहा तो वह केवल आत्मविनाश ही करेगा। आपका ज्ञान राम को नमित नहीं है तो वह रावण को ही नमित रहेगा।इस दशहरे के अवसर पर अपनी बुद्धि को अपने भीतर बैठे राम (बोध) को समर्पित करें। इस पुस्तक का यही उद्देश्य है

4.12 रात और चाँद



आचार्य प्रशांत द्वारा रचित अजर व रमणीय कविताओं को इस पुस्तक में एकत्रित किया गया है। मध्यरात्रि होने पर जब संसार प्रगाढ़ निद्रावस्था में लीन होता था तब उनकी कलम से प्रादुर्भूत होती ये कविताएँ जीवन के यथार्थ दर्शन का अति सुलभ रूप में चित्रण करती थीं। ये कविताएँ चाँद की भाँति इस तमोमय संसार में उस स्रोत की ओर इंगित करती हैं जो स्वयं चाँद को प्रकाशित करता है।

4.13 पंचतंत्र



संस्कृत नीतिकथाओं में पंचतंत्र का पहला स्थान है। इसकी रचना तीसरी शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास की गयी थी। कहानी के सभी पात्र पशु और पक्षी हैं। इनकी सभी कहानियाँ रोचक और नीतिपरक हैं, जो हमें उचित-अनुचित का पाठ पढ़ाती हैं। यहाँ हमें सीख मिलती है बन्दर से, सियार से व अन्य जीव जंतुओं से।

आचार्य प्रशांत जी ने इन कहानियों की शिक्षाओं को धरातल से उठाकर अध्यात्म की ऊँचाइयों पर पहुँचा दिया है। आचार्य जी बताते हैं कि ये जानवर और कोई नहीं बल्कि हमारे मन के ही सभी भावों के प्रतीक हैं। सभी जानवर किसी-न-किसी रूप में हमारे भीतर ही मौजूद हैं।

आचार्य जी की व्याख्या आपको इन कहानियों में छुपे रहस्यपूर्ण ज्ञान से परिचित कराएगी। इनकी कहानियाँ ही कुछ ऐसी हैं कि कई मौकों पर आपकी हँसी नहीं रुकेगी और कई मौके ऐसे आएँगे जिनमें आप आत्म-अवलोकन में डूब जाएँगे।

4.14 हिन्दी



जो लोग अपनी भाषा की ही इज़्ज़त नहीं कर सकते, कहाँ आगे बढ़ेंगे? आध्यात्मिक रूप से नहीं, भौतिक रूप से भी नहीं आगे बढ़ेंगे।

भारत को पुनर्जागरण (रेनेसां) चाहिए; हमें सुधार नहीं चाहिए, हमें पुनर्जागरण चाहिए। हमें अपने आप पर यकीन करना सीखना होगा।

हज़ार सालों तक मिली सामरिक हारों ने और झूठे इतिहासकारों ने—इन दोनों ने मिलकर के हमें भीतर से बिल्कुल पंगु कर दिया है, छलनी-छलनी कर दिया है।

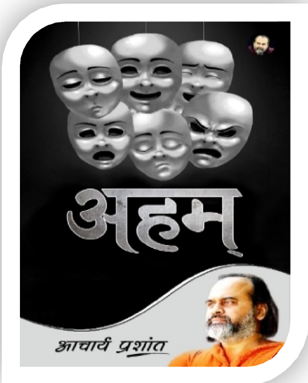
हम टूट गए हैं, हम चूरा-चूरा हो गए हैं। हम ऐसे हो गए हैं जैसे कोई बस रोटी के

लिए जिए।"

इन संवादों के माध्यम से आचार्य प्रशांत भारतीयों में अपनी ही भाषाओं के प्रति हीनभावना के मूल कारणों को समझाते हैं और उन सभी मूल्यों से अवगत करवाते हैं जो भारतीयों की असल पहचान हैं।

4.15 अहम

बहुत बातें संतजन, ऋषिजन अपने हाल का ब्यौरा देते हुए कहते हैं। वो बात आपकी नहीं हो गयी।



उन्होंने कह दिया, "अहम् ब्रह्मास्मि"। वो अपनी बात कर रहे हैं। वो ब्रह्म हैं, आप नहीं ब्रह्म हो गए। ये उनकी चेतना का स्तर है कि वो कह पाए ये बात।

और आपने कहा, "बढ़िया! अहम् ब्रह्मास्मि!" वो हैं ब्रह्म, आप नहीं हो गए। आप तो अभी ईमानदारी से यही कहिए कि, "अहम् भ्रमास्मि: मैं भ्रम हूँ!"

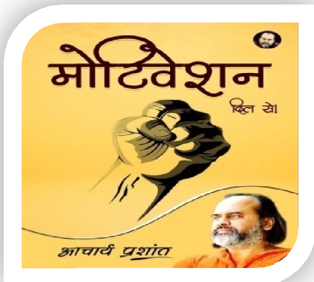
नहीं तो बड़ी गड़बड़ हो जाएगी, 'भ्रम' अपने-आपको 'ब्रह्म' बोल रहा है, और मज़े ले रहा है ब्रह्म बोलने के।

हमारे लिए अहम् हमारी ज़िंदगी है, झूठा कैसे हो गया? जिन्होंने अहम् को साफ़-साफ़ झूठा जाना, उनकी निशानी ये है कि उनकी ज़िंदगी में अहम् अब नज़र नहीं आता।

जिसकी ज़िन्दगी में नज़र न आए सिर्फ उसको हक है कहने का कि अहम् झूठ है। आपकी ज़िंदगी में अहम् है या नहीं है? तो आप क्यों कहते हैं कि अहम् झूठ है?

4.16 मोटिवेशन

मोटिवेशन का ऊँचे-से-ऊँचा ग्रंथ आज तक कौन-सा हुआ है? श्रीमद्भगवद्गीता। अर्जुन के सामने एक स्थिति है और वो भीतर से कमज़ोर अनुभव कर रहा है, उसे कोई उत्साह नहीं आ रहा, तब कृष्ण उसको समझाते हैं - ये असली मोटिवेशन है।



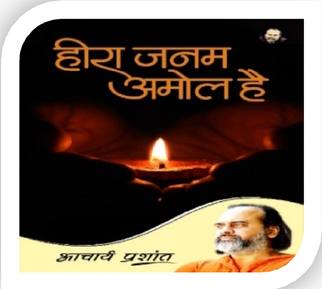
कृष्ण उसको नहीं कहते कि, "चल, जल्दी लड़ जब तक तू जीत न जाए!" इस तरह का कोई श्लोक है क्या गीता में? कृष्ण अर्जुन को क्या याद दिलाते हैं? कृष्ण अर्जुन को धर्म याद दिलाते हैं।

तुम्हें मोटिवेशन की नहीं क्लैरिटी की, स्पष्टता की, ज्ञान की ज़रूरत होती है। गीता तुम्हें क्या देती है? ज्ञान देती है। उत्साह थोड़े ही बढ़ाती है कि वीर तुम बढ़े चलो!

सही लक्ष्य तुम्हारा उत्साहवर्धन करके नहीं पाया जाता, तुम्हारा ज्ञानवर्धन करके पाया जाता है। अर्जुन का एक बार भी उत्साहवर्धन नहीं करते कृष्ण, ज्ञानवर्धन करते हैं।

4.17 हीरा जनम अमोल है

आज से पचास-साठ साल पहले एक मानसिक रोगी को जितनी एंग्ज़ायटी (उत्कंठा) महसूस होती थी, उतनी आज एक सामान्य युवा को महसूस होती है।



मूल कारण क्या है?

दो मुख्य कारण हैं: 1. कृत्रिम उपभोक्तावाद 2. बोध का पतन

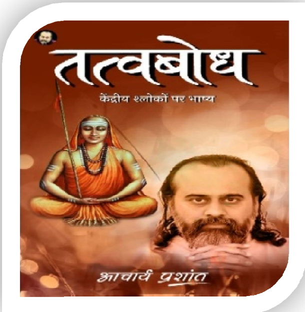
हर चीज़ की मांग हमारे मन में तैयार की जा रही है, हर चीज़ हम पा नहीं सकते, तो हम बहुत-बहुत निराश हो जाते हैं। वही निराशा फिर, एंग्ज़ायटी और डिप्रेशन के तौर पर सामने आती है। वही डिप्रेशन फिर आत्महत्या जैसे क़दमों की ओर बढ़ावा देता है।

आचार्य प्रशांत जी द्वारा किए गए ये संवाद इन मुख्य कारणों को गहराई से समझने और एक स्वस्थ जीवन जीने की ओर अग्रसर करते हैं। शुद्धतम रूप से गुरु बोध मात्र है। आत्मज्ञान, आत्मविचार ही आत्मबोध बन सकता है।

आत्मविचार में जब तुम अपने आप को देखते हो, तभी संभव होता है गुरु का तुम्हारे लिए कुछ कर पाना। जो स्वयं को देखने को राज़ी नहीं, गुरु उसके लिए कुछ नहीं कर पाएगा। गुरु ही प्रेरणा देता है आत्मविचार की, और आत्मविचार का आखिरी फल होता है आत्मबोध–यानि गुरु की प्राप्ति। गुरु से ही आदि, गुरु पर ही अंत; गुरु ही है आत्मा अनंत।

4.18 तत्वबोध

आदि शंकराचार्य उन महान दार्शनिकों में से हैं जिन्होंने अद्वैत वेदान्त की ऊँचाइयों को जनमानस तक पहुँचाया। इनका प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ था जब धर्म व्यभिचार और कुरीतियों के कारण पूर्ण रूप से कलंकित हो चुका था। आदि शंकराचार्य ने अद्वैत वेदान्त को धर्म के केंद्र में प्रतिस्थापित कर सनातन धर्म को पुनर्जीवित किया। उन्होंने आठ वर्ष की अल्पायु में ही गृहत्याग कर सम्पूर्ण भारत का भ्रमण किया। अद्वैत वेदान्त में उनकी गहरी श्रद्धा थी और वे चाहते थे कि सभी वेदांत की सीख से लाभान्वित हो अपने दुःखों और कष्टों से मुक्त हों। पर वे एक साधारण संसारी मन से भी परिचित थे इसीलिए उन्होंने कुछ ऐसे ग्रंथों की आवश्यकता समझी जो एक आम व्यक्ति को भी वेदान्त की उन्होंने 'तत्वबोध' की रचना ऐसे जिज्ञासुओं के लिए की है जो अध्यात्म के शुरुआती पड़ाव पर हों। इस ग्रंथ की रचना इस प्रकार है कि यह साधकों को कदम-दर-कदम आगे बढ़ाकर वेदान्त के



ओर ले जाएँ। मूल को उन तक पहुँचाता है।

प्रस्तुत पुस्तक में आचार्य प्रशांत ने 'तत्वबोध' के श्लोकों की समयानुकूल व्याख्या की है। यदि आप भी वेदांत के मर्म को समझना चाहते हैं और यदि आप में भी ब्रह्म, मन, शरीर, संसार और ईश्वर को लेकर मूलभूत जिज्ञासाएँ उठती हों, तो यह पुस्तक आपके लिए उपयुक्त है।

4.19 पैसा

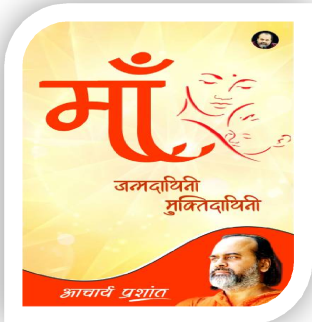


पैसा खूब कमाना धर्म हो सकता है और कभी महा-अधर्म भी हो सकता है, निर्भर इस पर करता है कि आपका मन पैसे का उपयोग क्या करेगा। पैसा ना अच्छा है ना बुरा है - आज़ादी अच्छी है। तो आज़ादी के लिए जितना पैसा चाहिए ज़रूर अर्जित करो, उससे ज़्यादा करोगे तो वही पैसा बंधन बन जाएगा।

जानें "पैसा कितना और क्यों?" आचार्य प्रशांत के साथ इस उपयोगी किताब में।

4.20 माँ

ये जो शब्द है, 'माँ' इसके दो अर्थ हो सकते हैं। दोनों अलग-अलग आयामों के अर्थ हैं। एक अर्थ ज़मीन का है और एक अर्थ आसमान का है।



एक अर्थ हो सकता है माँ का वो जिससे एक दूसरा शरीर निर्मित होता है। और सामान्यतया जहाँ कहीं भी हम देखते हैं कि एक व्यक्ति के शरीर से दूसरे व्यक्ति के शरीर का निर्माण हो रहा है, हम बड़ी आसानी से उस व्यक्ति को माता का या पिता का नाम दे देते हैं। ये बात सिर्फ़ शारीरिक है और इसीलिए बहुत सतही है।

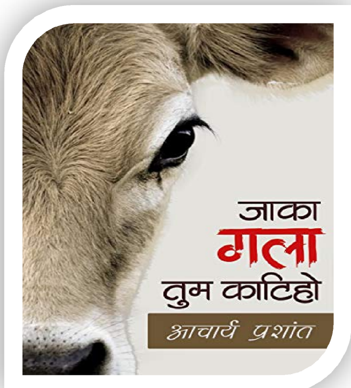
एक दूसरी माँ भी होती है जो तुम्हें शरीर से जन्म नहीं देती पर तुम्हें इस लायक बनाती है कि तुम समझ सको कि मन, शरीर और ये संसार क्या हैं। वो तुम्हारी वास्तविक माँ है।

पहली माँ मात्र शरीर देती है, और जो दूसरी माँ होती है, वो शरीर से मुक्ति देती है। शरीर से मुक्ति देती है, इसका अर्थ है कि वो समझा देती है कि शरीर क्या है, मुक्ति क्या है और ये संसार क्या है।

ममता नहीं, मातृभाव। ये हुआ वास्तविक अर्थों में माँ होना। पैदा तो कोई भी कर देता है, पर वास्तविक अर्थों में माँ हो पाना, पिता हो पाना बड़ा मुश्किल काम है। वो कोई-कोई होता है।

तुम माँ हो पाओ, तुम पिता हो पाओ, उससे पहले एक शर्त रख रहा हूँ तुम्हारे सामने: सबसे पहले खुद को जन्म दो। जिसने पहले स्वयं को जन्म नहीं दिया वो किसी और को जन्म नहीं दे पाएगा

4.21 जाका गला तुम काटिहो



शाकाहार तभी सार्थक है जब वह आत्मज्ञान से फलित हो। संस्कारगत आया हुआ शाकाहार बड़ा व्यर्थ है।

अध्यात्म एक बूटी है जिसके फायदे हज़ार हैं। सच आएगा जीवन में तो अहिंसा भी आएगी, अवैर भी आएगा, अपरिग्रह भी आएगा, अस्तेय भी आएगा। जानवर कट ही इसलिए रहे हैं क्योंकि आदमी के जीवन में सच नहीं है। हम जानते ही नहीं हैं कि 'हम हैं कौन'? हम जानते ही नहीं हैं कि 'खाना'

माने होता क्या है! हम उपभोगवादी युग में जी रहे हैं। जो कुछ भी दिख रहा है, वो हमारे लिए बस भोग की एक वस्तु है। वो इसलिए, क्योंकि 'अध्यात्म' को तो हमने कूड़ा-करकट समझकर के बिलकुल फेंक दिया है। जब आप अध्यात्म को फेंक देते हो 'कूड़ा' जानकर, तो जीवन में ज़बरदस्त अपूर्णता आ जाती है। उसी अपूर्णता से फलित होता है माँसाहार।

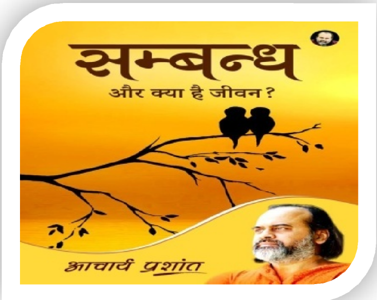
4.22 डर

अपूर्णता का विचार ही भय का जन्मदाता है। अविवेकी मन उस विचार पर विश्वास कर भयभीत हो उठता है और अपूर्णता के उपचारस्वरूप पाशविक वृत्तियों का अवलम्बन कर लेता है। जिसके कारण उसे सहस्त्र दुःखों से गुज़रना पड़ता है।



आचार्य प्रशांत इन संवादों के माध्यम से अपूर्णता के विचार को अकिंचित्कर बता कर उसका तिरस्कार कर एक विवेकपूर्ण जीवन जीने का सन्मार्ग बताते

4.23 सम्बन्ध



जीवन सम्बन्ध है। व्यक्ति का व्यक्ति से सम्बन्ध, प्रकृति से सम्बन्ध, समाज से सम्बन्ध। इन सम्बन्धों का आधार क्या है? क्या है हमारे सम्बन्धों की वास्तविकता? क्या हमारे सम्बन्ध डर, लालच, मोह, आसक्ति की छाया मात्र हैं, या ये प्रेम की अभिव्यक्ति हैं? क्या हमारे सम्बन्ध अकेलेपन से बचने के उपाय हैं, या आन्तरिक पूर्णता का प्रस्फुटन? इस पुस्तक में वक्ता ने जीवन सम्बन्धित इन प्रश्नों पर प्रकाश डाला है, और सच्चे प्रेम से अवगत कराया है

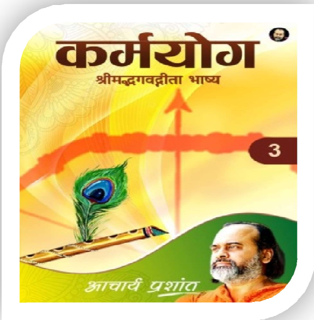
4.24 काम से राम तक

आज जिन्हें हम मुनि भर्तृहरि के नाम से जानते हैं वो एक समय पर उज्जैन के राजा भर्तृहरि के नाम से प्रसिद्ध थे। युवा अवस्था में वह एक विलक्षण राजनीतिज्ञ थे लेकिन उन दिनों उनकी कामुकता भी प्रबल थी, वह अपनी पत्नी व अन्य स्त्रियों के मोह से ग्रस्त थे।

फिर एक दिन उनके साथ कुछ ऐसा हुआ कि उनकी दुनिया ही पलट गई, स्त्री मोह को भूल वह गुरु गोरखनाथ के सबसे विद्वान शिष्य के रूप में निखर कर आए। उनकी रचनाओं को पढ़ेंगे तो पाएँगे कि वह शुरूआती दिनों से ही एक बेहतरीन कवि थे। श्रृंगार शतकम्, नीति शतकम् और वैराग्य शतकम् उनकी प्रमुख रचनाओं में गिने जाते हैं।

राजा भर्तृहरि से मुनि भर्तृहरि बनने तक की यात्रा और उनकी रचनाओं में छिपी सीख को समझें आचार्य प्रशांत के साथ। इस पुस्तक में आचार्य प्रशांत हमारे दैनिक जीवन से जुड़े प्रश्नों को लेकर मुनि भर्तृहरि द्वारा दिखाए मार्ग को और भी सरल व उपयोगी बना देते हैं।

4.25 कर्मयोग



विश्वभर में श्रीमद्भगवद्गीता को अध्यात्म का पर्याय माना जाता है। यहाँ तक कहा गया है कि जीवन से जुड़े हर प्रश्न का उत्तर इस ग्रंथ में समाहित है। श्रीकृष्ण द्वारा वर्णित कुछ मुख्य विषयों की सूची बनाई जाए तो उसमें 'कर्मयोग' का स्थान श्रेष्ठ रहता है। यह पुस्तक आचार्य प्रशांत द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय ३ 'कर्मयोग' पर दी गई व्याख्याओं पर आधारित है। वैसे तो यह ग्रंथ अति प्राचीन है परन्तु आचार्य प्रशांत द्वारा की गई व्याख्या इसको आज की पीढ़ी के लिए अत्यंत सरल व प्रासंगिक बना देती है

4.26 गुझिया और गुलाल

हमारे सभी त्योहार और पर्व उत्सव होते हैं। उनका एक विशेष महत्व होता है। इन त्योहारों के पीछे कोई पवित्र स्मृति या कहानी जुड़ी होती है, जो हमें कुछ सीख देती है। चाहे वह दीपावली हो या होली।



होली के पीछे भी एक सुंदर घटना है, जो कहानी कहती है हिरण्यकश्यप के अहंकार की, होलिका की चालाकी की और भक्त प्रह्लाद की निर्मलता और निर्दोषता की। पर अभी जिस प्रकार हमारा जीवन ही भोगवाद और बाज़ारवाद के हत्थे चढ़ चुका है, तो उसी तरह हमारे त्योहार भी कुरूप और कुत्सित हो चुके हैं। होली त्योहार के नाम पर अब हमें भक्त प्रह्लाद और राजा हिरण्यकश्यप याद नहीं आते बल्कि गुलाल, पिचकारी, हुल्लड़बाजी और नशाखोरी याद आते हैं।

इसी खतरे से परिचित कराने और साथ-ही-साथ होली पर्व की महत्ता और सुंदरता से आपको अवगत कराने के उद्देश्य से आचार्य जी की यह पुस्तक 'होली' आपके समक्ष लायी जा रही है। इस पुस्तक के साथ अपने त्योहार को और अपने जीवन को निर्मल करें।

4.27 श्री कृष्ण

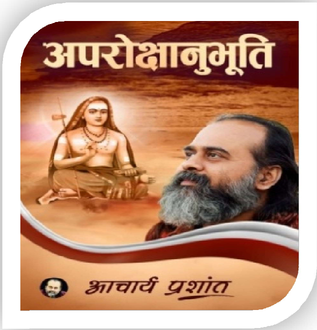


जब भी कोई संत, अवतार, पैगम्बर बात करते हैं, तो वो व्यक्तियों की बात नहीं करते। वो उस स्रोत की बात करते हैं जो भिन्न-भिन्न रूपों में प्रकट होता आया है। उस निर्गुण की ओर इशारा करते हैं जो गुणों को धारण कर समस्त जगत का कल्याण करता आया है।

इसी संदर्भ में आचार्य प्रशांत संग श्री कृष्ण पर हुए संवादों का संगठन इस किताब में एकत्रित किया गया है। उन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता के कुछ श्लोक व श्री कृष्ण के जीवन के उदाहरणों से हमारी जटिल जिज्ञासाओं का सरल व सीधा समाधान दिया है।

4.28 अपरोक्षानुभूति

अपरोक्षानुभूति का शाब्दिक अर्थ है: प्रत्यक्ष अनुभव अर्थात सीधे और सरल तरीके से स्वयं की सच्चाई को जान लेना। अपरोक्षानुभूति आदि शंकराचार्य द्वारा रचित प्रकरण ग्रंथ है। इसमें आचार्य शंकर ने वेदांत दर्शन के मर्म को सरल भाषा में प्रस्तुत किया है।



शुरुआती श्लोकों में 'साधन चतुष्टय' का वर्णन है अर्थात वो चार गुण जो एक साधक में होने अनिवार्य हैं। और फिर मध्य के श्लोकों में संसार की उत्पत्ति, हमारे अज्ञान और भ्रमित रहने के कारण और आत्मज्ञान के उपायों पर चर्चा की गई है। और अंतिम श्लोकों में निदिध्यासन के पन्द्रह अंगों—यम, नियम, त्याग, मौन, देश, काल, आसन, मूलबन्ध, देह की समता, नेत्रों की स्थिति, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि—को परिभाषित किया गया है। आदिशंकर कहते हैं कि इन सभी अंगों के निरन्तर अभ्यास के बिना ज्ञान प्राप्ति असंभव है।

अपरोक्षानुभूति में जो आत्मज्ञान के लिए बातें कही गईं हैं वह सीधी हैं, सरल हैं, सहज हैं; पर वो हमारे लिए सहज नहीं हैं। हम उस सहजता से बहुत दूर निकल चुके हैं, हम जटिल हो चुके हैं, इसीलिए इस पुस्तक के माध्यम से आचार्य प्रशांत अपरोक्षानुभूति के श्लोकों की सरल व्याख्या कर उसके मर्म को हमारे तल पर हमारी भाषा में समझा रहे हैं ताकि वो हमारे लिए उपयोगी हो सके।

इस पुस्तक का उद्देश्य है कि आप वेदांत की ऊँचाई को छू सकें और अपने देह और सांसारिक बन्धनों के कष्ट से मुक्त हो स्वयं को जानने की दिशा में आगे बढ़ सकें।

पंचम अध्याय

आचार्य जी की शैक्षिक विचारधारा

- मायाजाल
- एकाग्रता
- नकल
- खुद
- मुक्त
- मांगो मत
- निडरता
- मन
- सीखना
- गुरु
- परिवार
- पुस्तक

पंचम अध्याय

आचार्य जी की शैक्षिक विचारधारा

5.1 मायाजाल

भारत की जवानी के साथ ये एक जबरदस्त धोखा है, जो आज़ादी के बाद से ही चल रहा है। यू.पी.एस.सी में हज़ार से कम सीटें हैं- सात- सो, आठ सौ और किसी भी समय उसमें दस-पंद्रह लाख लोग लगे होते हैं। आप जानते नहीं हो कि आप कौन हो? आपको अपना पुराना शैक्षणिक रिकॉर्ड पता नहीं है क्या? आप कभी भी शीर्ष २०-३०% में भी नहीं आए, अब आप शीर्ष ०.१% में कैसे आ जाओगे?

लेकिन नहीं। इसी कोचिंग इंडस्ट्री के साथ फिर एक जुड़ी हुई इंडस्ट्री शुरू होती है, जिसका नाम है मोटिवेशन इंडस्ट्री और अक्सर जो कोचिंग पढ़ाने वाला होता है, वही मोटिवेटर (प्रेरक) भी बन जाता है। क्योंकि उसके लिए ज़रूरी है न वो आपको बताए, "देखो तुम्हारे पाँच साल खराब हो चुके हैं, लेकिन भागना मत। अभी तुम लगे रहो। तीन साल फ़ीस और दो, तैयारी करते रहो। तू करेगा! तू फोड़ेगा। चल फ़ीस जमा करा जल्दी तू से, एक साल कोचिंग और कर।" पूछो, तुम जाओ, बात करो, "क्यों लगे हो सात साल से?" तो बोलेंगे, वो सात ही साल तो लगाए हैं, इसके बाद चालीस साल कुछ नहीं करना पड़ेगा। तो सात साल की मेहनत करके अगर चालीस साल का आराम मिल जाए, तो बुरा ही क्या है?" बस ये है। और इसकी वजह से जो पूरी जॉब मार्केट है वही डीस्टॉर्टड (विकृत) हो गयी है, स्कयूड् (टेढ़ा) हो गयी है।

प्राइवेट सेक्टर में वेकेंसीज़ (रिक्त पद) हैं, उसमें लोग अप्लाई (आवेदन नहीं कर रहे हैं, क्यों? क्योंकि वहाँ आपको उतनी ही तनख्वाह मिलती है जिसके आप हकदार हैं। वो बंदा बोलता है, "नहीं, नहीं, नहीं ये बीस-पच्चीस हज़ार तो मेरे लिए बहुत कम हैं। इतना तो किसी सरकारी ऑफिस (कार्यालय) में चपरासी को मिल जाता है।" कंपनी में वो जाएगा अगर तो एक सॉफ्टवेयर इंजीनियर की, फ्रेशर की, एक साधारण इन हैंड (हाथ में) स्टार्टिंग सैलरी (आरंभिक वेतन) आती है, वो बीस-पच्चीस हज़ार ही आती है।

तो ये जो सरकारी कल्ट (पंथ) है, इसने इकोनॉमी (अर्थव्यवस्था) को, जॉबमार्केट (रोज़गार बाज़ार), सबको एकदम स्क्यूड कर दिया है, टोटली डिस्टॉर्टड (पूरी तरह से विकृत) और इस पूरे खेल में ये सब प्लेयर्स (खिलाड़ी) हैं – सरकार एक प्लेयर है, एडटेक इंडस्ट्री प्लेयर है, कोचिंग वाले सुपर स्टार प्लेयर्स हैं। ये जो आई.ए.एस, आई.पी.एस बन करके अपनी फैनडम (प्रशंसक) फैला रहे हैं, वो भी उसमें एक प्लेयर हैं। कुल मिलाकर के इसका खामियाजा भारत की पूरी अर्थव्यवस्था और पूरी जनसंख्या भुगत रही है।

ये समाज में दो विभाजन, दो वर्ग बनाए गए हैं। ये बात समझ में आ रही है? ये क्लासिकल मार्क्सिस्ट क्लास डिविज़न (शास्त्रीय मार्क्सवादी वर्ग विभाजन) है और कुछ नहीं। एक का काम है शोषण करना सरकारी वर्ग है। और दूसरे वर्ग का काम है- शोषित होते रहना। और एंट्रेंस एग्ज़ाम इन दोनों वर्गों के बीच की सीढ़ी है। तो तुम पाते हो कि पूरा भारत उस सीढ़ी के नीचे जमा हो गया है ताकि वो शोषित वर्ग से शोषक वर्ग की ओर जा सके। ये चल रहा है।

एक ऊपर का वर्ग है, उसका क्या काम है? शोषण करना। वो सरकारी वर्ग है। बिना कुछ करे ही उनको खूब मिलता है। पहले तो सैलेरी खूब मिलती है और जो ऊपरी कमाई है उसका तो कुछ कहना ही नहीं। और एक नीचे वाला वर्ग है, जो प्राइवेट लोग हैं, जिनको कुछ नहीं मिलता है। ना पैसे मिलते, ना मान-सम्मान मिलता, शादी के लिए लड़की भी नहीं मिलती। वो बेचारे ऐसे ही हैं। कोई बाप अपनी लड़की देना नहीं चाहता। क्या कहता है? "प्राइवेट में है। किसी लाला के यहाँ नौकरी करता है। इसको कौन लड़की देगा?"

प्राइवेट में जो सैलेरी कम है, उसका भी एक कारण यही है कि सरकार में सैलरी ज्यादा है तो ये भी सम्बन्ध समझना होगा। जो सरकार मुफ़्त का इतना पैसा बाँट देती है अपने कर्मचारियों को, वो पैसा कहाँ से आता है? कहाँ से आता है? वो पैसा प्राइवेट को ही चूस चूस कर आता है। तो प्राइवेट का शोषण किया जा रहा है ताकि सरकारी कर्मचारियों को मुफ़्त पैसा बाँटा जा सके।

यू.पी.एस.सी की जो तैयारी मैंने छोड़ी मेरे अटेम्प्ट्स बचे हुए थे सबा और एग्जाम दिला सकता था कि प्रॉपर (एकदम) आई. ए. एस में ही घुसेंगे। मैंने कहा, "नहीं।" उसकी एक वजह ये भी थी कि ये जो पूरी प्रक्रिया थी न एंट्रेंस की, वो बहुत उबाऊ थी वो परीक्षा ऐसी नहीं थी जी आपको स्टिम्युलेट (प्रेरित करे या तो एक्साइट (उत्साहित करे। वहाँ पर ना तो तुम्हारी प्रतिभा पर जोर था, ना तो तुम्हारी बुद्धि की तीक्ष्णता पर जोर था वहाँ रट्टेबाजी का काम ज़्यादा था तो जो लोग उस परीक्षा को क्लियर करके निकलते भी हैं, वो कोई बड़े अच्छे, बड़े ऊँचे, बड़े प्रतिभावान लोग नहीं हैं।

आई.आई.टी क्लियर करना एक बात है. यू.पी.एस.सी क्लियर करना बिलकुल दूसरी बात है। आप एकदम टेलेंटलेस (प्रतिभाहीन) होकर के भी अगर आठ-दस साल रट्टा मार रहे हो, तो हो सकता है यू.पी.एस.सी. टॉपर बन जाओ तो उनमें ऐसी कोई खास बात होती नहीं है और मुझे वो उबाऊ प्रक्रिया पसंद भी नहीं आ रही थी। एक-के-बाद-एक थ्योरम (प्रमेय) रट रहे हैं। थ्योरम के प्रूफ का क्वेश्चन (प्रश्न) आ रहा है कि थ्योरम का प्रूफ लिखो। अब रट कर गए हो और वहाँ थ्योरम का प्रूफ लिख रहे हो नहीं करना है यार ये सब सवाल ऐसा दो न जी जरा तो ये भी अपने दिमाग से निकाल दो कि यू.पी.एस.सी क्लियर करने वाले बड़े होनहार लोग होते हैं। कुछ नहीं। बहुत साधारण आदमी अगर बस अपने आपको खच्चर की तरह वहाँ घिस रहा है, तो छः-आठ साल में कर लेगा क्लिअर।

5.2 एकाग्रता

अक्सर जो काम तुम कर रहे होते हो, वो इस लायक ही नहीं होता कि मन आकर उसमें ठहर जाए। हम मन के साथ ज़बरदस्ती करते हैं। हम मन से कहते हैं, "तू वो काम कर जिसमें तुझे कोई चैन नहीं दिख रहा" । अब तुम ज़्यादा ज़बरदस्ती करोगे तो हो सकता है मन कुछ समय के लिए मान भी जाए। इस ज़्यादा ज़बरदस्ती को कहते

तो मन इसीलिए उस काम में लगता नहीं है।

कोई काम ऐसा ढूँढो जो इतना सच्चा हो कि मन उससे इंकार कर ही ना सके। फिर सवाल पूछने की ज़रुरत ही नहीं रहेगी कि, "मन कैसे लगाऊँ?" मन दौड़-दौड़ कर लगेगा, मन खुद लगेगा।

5.3 नकल

जो पहली बात सवाल ऐसे मत पूछो कि, "एक आदर्श आदमी का अंतस कैसा होता है?" क्योंकि तुम आदर्श को अभी जानते नहीं। सच तो ये है कि आदर्श कह कर तुमने यही दिखाया है कि तुम किसी की नक़ल करना चाहते हो, क्योंकि आदर्श कुछ होता ही नहीं। ये जो नक़ल से भरा हुआ जीवन है, ये जो नकली, झूठी जिन्दगी है, ये तुम्हारे किसी काम की नहीं है**। ये** क़रीब क़रीब एक मुर्दा ज़िन्दगी है।

5.4 खुद को जानें

हम कैसे हैं? खुद को जानें।" और उसमें कोई दिक्कत नहीं है। सुबह से ले कर के शाम तक जो करते हो उसी को ध्यान से देखो, रोजमर्रा की जो तुम्हारी ज़िन्दगी है, बस उसी को ध्यान से देखो अपने-आप को देखेंगे और असली रहेंगे।होश कायम रहे कि "ये जो मैंने किया ये किया क्या?"

5.5 मुक्त

"मुक्त होते हुए भी हम मुक्त नहीं हैं, ये बिलकुल ठीक बात है। याद रखना कोई कानून, कोई संविधान, कोई व्यवस्था मुक्ति नहीं दे सकती अगर तुम्हारे पास फ्रीडम ऑफ दी माइंड नहीं है। संविधान अधिक-से-अधिक यही तो बना देगा कि बोलने की स्वतंत्रता है। पर बोलोगे क्या तुम, जब बोलने के लिए कुछ है ही नहीं?

जब मन ही मुक्त नहीं है तो बोलोगे क्या?

एक हाथी का बच्चा होता है। जब छोटा होता है तो उसके बहुत ताक़त तो होती है नहीं क्योंकि अभी पैदा हुआ है, पंद्रह-बीस दिन हुए हैं उसे, तो उसको एक खूँटे से बाँध दिया जाता है। और एक रस्सी है जो बहुत लम्बी नहीं है, छोटी-सी ही है। अब बच्चा अपनी पूरी कोशिश करता है मुक्त होने की क्योंकि मुक्ति हमारा मूल स्वभाव है।

वो पूरी कोशिश करता है। वो गोल-गोल घूमता है, सब तरीके अपना कर के देख लेता है। वो जितना घूम सकता है उस खूँटे के चारों ओर घूम लेता है। फिर महावत उसके चारों ओर एक बड़ा सर्किल बना देता है। वो ये पाता है कि कितनी भी कोशिश कर ले उस सर्किल के पार नहीं जा सकता।

आगे चलकर बड़ी मज़ेदार घटना घटित होती है। वो घटना ये है कि वो हाथी पूरा बड़ा हो जाता है लेकिन उसके बाद भी उसको उतनी ही पतली सी रस्सी से खूँटे में बाँध कर रखा जाता है और वो कभी भी उस सर्किलको पार नहीं करता, मुक्त होते हुए भी।

मुक्ति उसे पूरी है, पार कभी भी कर सकता है, लेकिन पार नहीं करता। फ्रीडमउसे पूरी है, पार भी कर सकता है, लेकिन पार करता नहीं है। इसलिए मुक्त होकर भी मुक्त नहीं है। यही तुम्हारे प्रश्न का उत्तर है।

5.6 मांगो मत

कोई ज्ञान तुम्हारा जीवन नहीं बना सकता। तुम जो हो, सो हो। कोई क़िताब न आज तक लिखी गई है, न उतरी है, न लिखी जाएगी, जो तुम्हारा जीवन परिवर्तित कर दे। हाँ, कोई किताब ऐसी ज़रूर हो सकती है जो तुम्हें परिवर्तन की उम्मीद से आज़ाद कर दे। उतना ठीक है।

पर तुम्हारी तो उम्मीद ही बड़ी बेहद की है। तुम कहते हो, "ये क़िताब पढूँगा, इससे कैरियर बन जाएगा तो में चमक जाऊँगा।" तुम चमक कैसे जाओगे ?

है! जब भी किसी से तुम ऐसा कुछ माँगोगे जो दे पाने की उसमें पात्रता ही नहीं, तो उसके और तुम्हारे सम्बन्ध में खटास आ जाएगी। तो क़िताब से भी तुम वही माँगते हो, जो तुम अपने प्रेमी से माँगते हो।

तुम क़िताब के माध्यम से भी पूर्णता पाना चाहते हो, और प्रेमी के माध्यम से भी। दोनों ही नहीं दे सकते तो पुस्तक और प्रेमी दोनों विफल रह जाते हैं, और दोनों तुम्हें डराते हैं।

और एक मोड़ पर आकर तुम दोनों को कहीं फेंक आते हो।

काम निकल गया है, उसके बाद किताबें रखते हो क्या अपने पान?

ठीक उसी तरह से न उम्मीद जब हो गए, तो प्रेमी रखते हो अपने पास?

तुम कहते हो, "जो तुझसे न मिला वो अगले से मिलेगा।"

मत माँगो संसार से जो संसार तुम्हें दे नहीं सकता न कोई किताब,

न कोई विचार, न कोई वस्तु। तुम्हें तुम्हारी पूर्णता कोई नहीं दे सकता। तुम पूर्ण हो, तुम चमके हुए हो।

5.7 निडरता

वो तुमको प्रदर्शित करना पड़ेगा कि, "मैं अकेले चल सकता हूँ। और अकेले चलूँगा, तो संभव है कि ठोकर खाऊँ। पर अगर गिगा तो संभाल लूँगा।" और ये बात सिर्फ मुँह से कहने की नहीं है। ये तुम्हारी जिंदगी में दिखाई देनी चाहिए कि तुममें अब अकेले चल पाने की, चोट खा कर भी दोबारा उठ पाने की काबिलियत आ गई है। और काबिलियत तो है ही। इतने बड़े हैं हम, कोई छोटे थोड़े ही है। पर वो काबिलियत दिखानी पड़ेगी। और जब दिखाओगे तो उन्हें बड़ी खुशी होगी।

और परिपक्व आदमी का पहला लक्षण है- अकेले चल पाने से डर ना लगना। अकेले रह पाने से डरना नहीं, अकेले सोच पाने से डरना नहीं, अकेले जी पाने से डरना नहीं यही परिपक्वता है।

इसका ये मतलब नहीं है कि वो ज़बर्दस्ती अकेला रहता है। सबके साथ रहता है, लेकिन अकेलेपन से डरता नहीं है। कोई अनिवार्यता नहीं है कि अकेले ही रहना है। सबके साथ रहना है, मज़े में रहना है, लेकिन अकेलेपन से डरना नहीं है।

जो अकेलेपन से डरता नहीं है, वही सबके साथ दोस्ती का संबंध रख सकता है। जिसको अकेला होना नहीं आता, वो किसी का दोस्त नहीं हो सकता।

5.8 मन

एकाग्रता का अर्थ होता है कि मन किसी एक विषय पर जा कर बैठा रहे। तो किसी ने कहा कि मन अपने अनुभवों के बारे में सोचता रहता है। फिर हमने जानना चाहा कि कौन से अनुभवों के बारे में। तो बात खुल रही है कि मन अपने सबसे पसंदीदा और अपने सबसे अप्रिय अनुभवों के बारे में ही सोचता रहता है। मन उड़-उड़ कर वहीं बैठेगा जहाँ बैठने की उसको लगातार माहौल द्वारा शिक्षा दी गई है। एकाग्रता की कोई समस्या है ही नहीं।

हमने मन को कैसा संस्कारित किया है। हमने किन जगहों पर मन को रुचि लेना सिखा दिया है।

मन के पास अपने कोई इंटरेस्टनहीं होते, कोई रूचियों नहीं होतीं। कभी ये दावा मत करना कि मेरी रुचि इस काम में है। सारी रुचियाँ मन को सिखाई जाती हैं। एक विद्वान ने एक बच्चे के मन के लिए नाम दिया है. 'टेबुला रासा खाली स्लेट, खाली स्थान उसमें कुछ लिखा नहीं होता ना रुचि लिखी होती है, ना अरुचि लिखी होती है।

तुम उसमें रुचियाँ अरुचियाँ खुद भरते हो। तुम्हारे जीवन के प्रारंभ में रुचियाँ अरुचियाँ भरी जाती हैं, माहौल द्वारा, जिसमें तुम्हारा कोई बस नहीं है। और एक उम्र के बाद वो रुचियों अरुचियों तुम्हारे ही द्वारा भरी जाती है। तुम जैसी ट्रेनिंगदे रहे हो मन को, मन उसी के अनुसार एकाग्रता का विषय चुन लेता है। तुमने जो धारणाएँ बना रखी है, मन उसी के अनुसार कहीं पर जाकर बार-बार बैठने की शिक्षा पा लेता है|

5.9 सीखना

आज के समय में जब तन-मन मनुष्य के दोनों बेकार, बीमार होते ही जा रहे हैं, उस समय में यदि कोई कहे कि योग जैसी साधना सिखाने के बावजूद उसे मूल्य महत्त्व नहीं मिल रहा है, तो इसका मतलब जो सिखाया जा रहा है, अभी उसमें ही

प्रवीणता नहीं है। और गहराई से अपने क्षेत्र में प्रवेश करो। जो तुम्हारे सामने सीखने वाले शिष्य, साधक आते हैं,उनसे और गहरे संबंध स्थापित करो | मात्र सिखाओ ही नहीं, समझाओ भी।

5.10 गुरु

रामकृष्ण परमहंस के गुरु थे तोतापुरी महाराजा अब तुम देखोगे तो, उनकी थी इतनी बड़ी तौदा अब तुम खुद मोटे आदमी हो, तुमने कहा, "मैं तो गुरु को ही उदाहरण बनाऊँगा", ये स्वार्थ की बात हो गई ना तुमने गुरु पकड़ा ही इस दृष्टि से है कि जलेबियाँ चलती रहें।

तो ठीक है, तुम्हारी निष्ठा सम्माननीय है, सुन्दर है। तुम गुरु को ही उदाहरण बनाना चाहते हो, लेकिन फिर गुरु तुम्हें अन्य जिन उदाहरणों की ओर प्रेषित करे, वहाँ जाने से इंकार मत करना।

आओ गुरु के पासा और फिर गुरु कहे, वहाँ चले जाना" तो ये मत कहना कि इतनी तो आपमें श्रद्धा रखता हूँ कि आप तक आ जाऊँगा। लेकिन इतनी श्रद्धा नहीं रखता कि आप जिधर को भेजेंगे वहाँ को चला भी जाऊँगा।" ये बात बेईमानी की हो गई। गुरु के पास आ रहे हो अगर तो गुरु जब दूर भी भेजे, तो दूर चले जाओ। जिस दिशा भेजे उस दिशा चले जाओ। ये मत पूछो कि, "मिलेगा क्या?"

5.11 प्रेम

"परिवार में सच्चाई होनी चाहिए, रिश्तों में मधुरता होनी चाहिए, रस होना चाहिए, प्रेम होना चाहिए, निष्कामता होनी चाहिए

पूरा ब्रह्माण्ड ही हमारा परिवार है" हमारे खेल, देखते नहीं हो, एक दूसरे को पछाड़ने के खेल हैं?

हमारा ऐसा कोई खेल है ही नहीं जो प्रेम का हो।

हमारा ऐसा कोई खेल है ही नहीं जिसमें हार कर जीता जाता हो

5.12 पुस्तक

जो एक वाक्य पढ़ सकता है, वो पूरा अध्याय भी पढ़ सकता है। इतना पढ़ लिया तो और क्यों नहीं पढ़ सकते? वाट्सएप्प मैसेज पढ़ते हो या नहीं? होर्डिंग (पट विज्ञापन) पढ़ते हो या नहीं? बाज़ार में निकलते हो तो बैनर पढ़ते हो या नहीं? जब ये सब पढ़ सकते हो तो एक अध्याय क्यों नहीं पढ़ सकते? छोड़ो एक अध्याय, किताब का एक पैराग्राफ (अनुच्छेद खंड) क्यों नहीं पढ़ सकते? क्या नहीं पढ़ सकते?

सब पढ़ सकते हो न बस इसको पढ़ने में कोई प्रेरणा नहीं है ।

शरीर को और विकसित करो। और अब जब किताबों के पास जाओ तो ये मान कर जाओ कि इनके माध्यम से तो नौकरी नहीं लगनी है। उनको वैसे ही पढ़ो जैसे कोई पोस्टर पड़ता है, जैसे कोई उपन्यास पड़ता है। किस्से कहानी की तरह पढ़ो किताबों को, फिर दिक्कत नहीं आएगी।

षष्ठ अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

- निष्कर्ष
- सुझाव
- शैक्षिक उपादेयता
- भावी शोध हेतु सुझाव

षष्ठ अध्याय

निष्कर्ष एवं सुझाव

6.1 निष्कर्ष

शोधकर्ता द्वारा प्रस्तुत लघु शोध-प्रबन्ध '**आचार्य प्रशांत का शैक्षिक योगदान**' के निम्नलिखित निष्कर्ष प्राप्त किये गये हैं—

6.1.1 जीवन परिचय सम्बन्धी

आचार्य प्रशान्त जी के जीवन परिचय सम्बन्धी निष्कर्ष इस प्रकार हैं —

- प्रशांत त्रिपाठी का जन्म 1978 को महाशिवरात्रि के पावन अवसर पर उत्तर प्रदेश के आगरा शहर में हुआ था।
- आचार्य जी के माता-पिता और शिक्षकों ने उन्हें एक ऐसा बालक पाया जो कभी शरारत करता तो कभी अचानक गहन चिंतन में डूब जाता। दोस्त भी उन्हें एक अपरिमेय स्वभाव वाला याद करते हैं, अक्सर यह सुनिश्चित नहीं होता था कि वे मज़ाक कर रहे हैं या गंभीर हैं।
- आचार्य प्रशांत एक प्रतिभाशाली छात्र होने के कारण वे लगातार अपनी कक्षा में शीर्ष पायदान पर रहे एवं उच्चतम संभव प्रशंसा और पुरस्कार प्राप्त किए।
- आचार्य प्रशान्त जितना विज्ञान और गणित में निपुण हैं उतना ही हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में|
- आचार्य प्रशांत जी को राज्य के तत्कालीन राज्यपाल ने बोर्ड परीक्षाओं में एक नया कीर्तिमान स्थापित करने और एनटीएसई स्कॉलर होने के नाते एक सार्वजनिक समारोह में सम्मानित किया|
- आचार्य प्रशान्त जी ने आईआईटी, आईआईएम की शिक्षा और सिविल सेवा की परीक्षा पास करने के बाद भी गुरु बनकर अपना पूरा जीवन मानव सेवा अर्थात मानव कल्याण में लगा दिया|
- आचार्य प्रशांत बहुमुखी प्रतिभा के धनी हैं|
- आचार्य प्रशान्त जी महज पाँच साल की उम्र से ही बहुत जिज्ञासु हैं|
- आचार्य प्रशांत इतने चिंतनशील हैं कि चांदनी रात में सारी रात किसी विषय को लेकर सोचते रहते हैं|
- आचार्य प्रशांत जी शिक्षाविदों के स्थान पर रहस्यवादियों का विशेष अध्ययन किया|

6.1.2 व्यक्तित्व सम्बन्धी

आचार्य प्रशांत जी के व्यक्तित्व सम्बन्धी निष्कर्ष इस प्रकार हैं —

- आचार्य जी समय पालन को विशेष महत्त्व देते हैं।
- आचार्य जी का जीवन योगमय है।
- आचार्य जी तड़क-भड़क से दूर सादा जीवन व्यतीत करते हैं।
- आचार्य जी ने अपने जीवन में सत्य आचरण को प्रमुखता से अपनाया है।

- आचार्य जी खोजी प्रवृत्ति के धनी हैं। वह नित नई-नई चीजों को खोजते रहते हैं।
- आचार्य जी सभी को समदृष्टि से देखते हैं। वे जाति, धर्म, लिंग इत्यादि किसी भी आधार पर भेद-भाव नहीं करते हैं।
- आचार्य जी छोटे बच्चों से लेकर बुजुर्गों तक सबसे प्रेम करते हैं।
- आचार्य जी किसी भी वातावरण एवं परिस्थिति में सहज ही घुल-मिल जाते हैं।
- आचार्य जी पूर्णतः सात्विक एवं शाकाहारी हैं।
- आचार्य जी को अपना काम स्वयं करना पसन्द है। वह बड़े ही स्वावलम्बी हैं।
- आचार्य जी सभी का सम्मान करते हैं।
- आचार्य जी बचपन में बड़े ही शरारती थे। बचपन का लड़कपन एवं शरारत उनके जीवन का अभिन्न अंग है; जिसकी झलक उनमें अब भी देखी जा सकती है।
- आचार्य जी अत्यन्त निर्भीक हैं।
- आचार्य जी लम्बी कार्य क्षमता के धनी हैं।
- आचार्य जी में सहनशीलता एवं क्षमाशीलता के गुण विद्यमान हैं।
- आचार्य जी को आध्यात्मिक लेखन कार्य अत्यन्त प्रिय है।
- आचार्य जी नेतृत्वशीलता के गुण के धनी हैं।
- आचार्य जी अत्यन्त धैर्यवान हैं। वह विपरीत परिस्थितियों में भी अपने धैर्य को बनाये रखते हैं।

6.1.3 कृतित्व सम्बन्धी

- आचार्य प्रशांत जी लगभग 28 से अधिक पुस्तकों का लेखन कार्य कर चुके हैं|
- आचार्य जी लगभग 17 प्रकार की गीता और 60 प्रकार के उपनिषदों का पाठन कार्य करवाते हैं|
- आचार्य प्रशांत जी ने वेदान्त को अपने स्तर से लिखा तथा उसके गूढ़ रहस्यों को समाज के कोने-कोने तक पहुंचाने का कार्य भी कर रहे हैं|
- इन्होंने प्रशांत फाउंडेशन नामक एक गैर लाभकारी संगठन की स्थापना भी करी है|
- 28 साल की उम्र में इन्होंने अद्वैत लाइफ एजुकेशन नामक संस्था का निर्माण किया|
- लगभग 30 साल की उम्र के बाद इन्होंने आत्म जागरूकता शिविर का आयोजन करना शुरु कर दिया|
- आज के समय में आचार्य जी के इंटरनेट, यूट्यूब इत्यादि पर हजारों वीडियो और लेख अनमोल आध्यात्मिक संसाधन के रूप में उपलब्ध हैं|

6.1.4 शैक्षिक विचार सम्बन्धी

- आचार्य प्रशान्त जी मानते हैं कि वास्तविक शिक्षा घर से ही प्रारम्भ हो जाती है अतः घर का माहौल शिक्षा से संबंधित होना चाहिए।

- सरकारी नौकरी एक मायाजाल है|
- एकाग्रता तभी संभव है जब हम मन लगाकर कार्य करें|
- नकल करना आदर्श नहीं है|
- हम खुद को कैसे जानें| मुक्त होते हुए भी आप मुक्त नहीं|
- मत मांगो संसार से| निडरता पूर्वक अकेले चलना ही परिपक्वता है|
- मन उड़-उड़ कर वहीं बैठेगा, जहाँ बैठने की उसको लगातार माहौल द्वारा शिक्षा दी गई है|
- जो कुछ सीखना है, उसमें प्रवीणता/गहराई विकसित करें|
- गुरु को उदाहरण बनाओ वह जिस दिशा में भेजे उस दिशा में चले जाओ|
- परिवार में प्रेम होना चाहिए| किताबों को किस्से कहानी की तरह पढ़ें|

6.2 सुझाव

प्रस्तुत शोध अध्ययन के आधार पर निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

- विद्यालयों में शिक्षकों को विषय के ज्ञान के साथ-साथ प्राचीन भारतीय संस्कृति का भी ज्ञान होना चाहिए|
- शिक्षकों को अपने सांस्कृतिक, आध्यात्मिक एवं आधुनिक शिक्षण पद्धति के ज्ञान को पुस्तकों, पत्रिकाओं, वेद, पुराण, इन्टरनेट आदि से नवीन करते रहना चाहिए।
- शिक्षकों को समय-समय पर प्राचीन भारतीय सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक विरासत संबंधी प्रोजेक्ट कार्य/सेमीनार/वर्कशाप में भाग लेना चाहिए|
- सप्ताह में कम से कम दो बार भारतीय संस्कृति एवं आध्यात्म से जुड़े विषयों पर विचार विमर्श करना चाहिए|
- विद्यालयों में बच्चों को भारतीय संस्कृति और नैतिकता से जुड़े प्रोजेक्ट कार्य देने चाहिए जिससे बच्चे अपनी संस्कृति के बारे में समझ सकें।
- विद्यालयों को वर्तमान शैक्षिक वातावरण में पाश्चात्य अंधानुकरण को देखते हुए भारतीय संस्कृति और अध्यात्म के महत्व को समझना चाहिए तथा आधुनिक शिक्षा के साथ-साथ इसके प्रति जगरूकता बढ़ानी चाहिए|
- बचपन से ही यदि कोई बालक चतुर और नटखट है तो इसे सकारात्मक रूप में लेना चाहिए क्योंकि ऐसे बालकों में मानसिक विकास की सम्भावनाएं अपार होती है।
- वर्तमान विद्यालयी शिक्षा में उच्चारण सम्बन्धी त्रुटियाँ होती रहती हैं इसके लिए संस्कृत भाषा का अध्ययन अनिवार्य रूप से होना चाहिए।
- भगवद्गीता एवं अन्य धार्मिक ग्रन्थों का परिचय विद्यालयी शिक्षा में होना चाहिए इससे विद्यार्थी अपने धर्म व संस्कृति के बारे जागृत रहेंगे।

- मनुष्य को आध्यात्मिक चिन्तन पर भी जोर देना चाहिए क्योंकि आध्यात्मिक चिन्तन से मानसिक एकाग्रता होती है।

- समाज के सभी वर्गों के लिए शिक्षा की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। सरकारी भ्रमजाल से बचने का पूरी तरह प्रयास करें|
- क्या सही है तथा क्या गलत है इसका सही स्थिती कि जांच पड़ताल अवश्य करें|
- ज्यादा समय तक सरकारी नौकरी के पीछे भागने पर आपका आर्थिक सामाजिक यो राजनैतिक सभी प्रकार का अस्तित्व समाप्त हो जाता है तथा इससे बचने का प्रयास करना चाहिए|
- शोषित तथा शोषक दोनों को हिदायत प्रदान की गई है|
- व्यक्ति किसी कार्य में तभी सफल हो सकते हैं जब वह उस कार्य को पूर्ण मनोयोग से करें जिस कार्य में विद्यार्थियों की रुचि न हो| अत: विद्यार्थियों को विद्यालय में विषय का सुझाव चुनाव करते समय अपनी रूचियों को प्राथमिकता देनी चाहिए|
- दूसरे मित्रों की देखा देखी विषय चयन नहीं करना चाहिए इसी प्रकार माता पिता एवं अभिभावकों को विद्यार्थियों पर कोई विषय थोपे नहीं जाने चाहिए | विषय विशेष में प्रवेश के पूर्व विद्यार्थियों का अभिवृद्धि परीक्षण आवश्यक किया जाना चाहिए अरुचिकर या लादे गए विषयों के कारण विद्यार्थी परीक्षा में असफल हो जाते हैं, और वह आत्महत्या तक कर लेते हैं| इसलिए विद्यार्थियों को विशेष चयन से पूर्व उनकी काउंसलिंग कराई जानी चाहिए|
- यदि हम किसी भी विषय का अध्ययन मन लगाकर करते हैं तो हर विषय में आगे बढ़ने की असीम सम्भावनाएं होती है कोई भी विषय अच्छा या बुरा नहीं होता हर विषय में इस्कोप होता है|
- आवश्यकता पात्रता विकसित करने की है पात्रता तभी विकसित हो सकती है जब विषय विद्यार्थी के मन के अनुकूल होगा|
- सभी विषयों के शिक्षकों को शिक्षण कार्य रोचक तरीके से किये जाने चाहिए ताकि विद्यार्थी मन से विषय विशेष को स्वीकार कर सके और उसके आगे बढ़ने की राह आसान हो सके|
- हम प्रायः जीवनभर किसी न किसी की नकल करते रहते हैं, नकल करने से हम किसी एक निश्चित उंचाई तक ही पहुँच पाते हैं|
- जबकि नकल न करने से हमारे सम्मुख अनंत छितिज होता है अर्जुन उतना ही सीख पाया जितना गुरु द्रोणाचार्य जी ने सिखाया जबकि एकलव्य अपने बल पर उससे कहीं अधिक आगे बढ़ गया|
- विद्यार्थियों को बचपन से ही इस दृष्टिकोण को बताया जाना चाहिए एवं अभ्यास करवाया जाना चाहिए|
- शिक्षकों को इसके लिए विद्यार्थियों को अलग-अलग गृह कार प्रोजेक्ट कार्य(अनूठे एवं विलक्षण) दिए जाने चाहिये ताकि विद्यार्थियों की वास्तविक प्रतिभा निखर सके|
- स्वयं को जानना ही सफलता की कुंजी है|
- हमें अपने दिन प्रतिदिन के कार्यों को साक्षी भाव से अवलोकन करना चाहिए|
- हमें दूसरों को नहीं वरन स्वयं को देखना है अपने कार्यो को देखना है कि मैं कितना सही हूँ ऐसा अभ्यास करने पर हम निश्चय ही उन्नति के शिखर पर पहुँच सकेंगे स्वयं को देखने के अभ्यास हेतु बौद्ध ध्यान की विशिष्ट विधि है

(विपश्यना अत्यंत सहायक है) जिसको 10 दिवसीय नि:शुल्क शिविरों के माध्यम से आसानी से सीखा जा सकता है|

- विद्यार्थियों एवं शिक्षकों को कम से कम एक बार विपश्यना प्रशिक्षण हेतु आवश्यक भेजा जाना चाहिए|
- महावत पालतू हाँथी की तरह हमने अपने मस्तिष्क को बांध दिया है|
- बचपन से ही विद्यालयों में बच्चों के कुछ पूछने पर शिक्षकों द्वारा चुप करा दिया जाता है|
- पूरी शिक्षा स्मृति स्तर तक सीमित होकर रह गई है बोध और चिंतन का अभ्यास नहीं कराया जा रहा है यही कारण है की सब की बुद्धि कुंद हो गई है|
- अतः विद्यालयों में विद्यार्थियों को अधिक प्रयोगात्मक, बोधात्मक, चिंतन परख (समाधान) अभ्यास के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए| ताकि जीवन के हर क्षेत्र में कोई भी कार्य करने से पहले विद्यार्थी उस पर चिंतन करना सीख जाए|
- तभी वह सही अर्थों में मुक्त कहलाएगा और मनोवांछित उड़ान भर सकेगा|
- संसार से हमें कोई अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए कोई पुस्तक हमें ज्ञानवान नहीं बना सकती है|
- कोई व्यक्ति वस्तु हमें सुखी नहीं बना सकती हर व्यक्ति अपने आप में पूर्ण है|
- हर व्यक्ति की खुद की समझ स्वयं का चिंतन और स्वयं का अनुभव स्वयं का विचार ही उसे पूर्ण बनाते हैं

जो अपने आप में अनूठे हैं/अद्वितीय हैं|

- किसी अन्य व्यक्ति से कोई तुलना नहीं है अतः विद्यार्थियों को स्वयं का विवेक विकसित करने हेतु प्रेरित किया जाना चाहिए तभी वह जीवन में सच्चे अर्थों में वह सफल हो सकता है|
- इसके प्रशिक्षण अभ्यास हेतु विद्यालय में "जीवन विद्या शिविर" का समय-समय पर आयोजन किया जाना चाहिए|
    - विद्यार्थियों को उनके द्वारा स्वयं के निर्णय लेने उन पर अडिग रहना एवं उनके परिणामों का सामना करना एवं योग्यता का विकास किया जाना चाहिए|
    - उन्हें विभिन्न समस्यात्मक परिस्थितियों से जूझने के अवसर प्रदान किए जाने चाहिए समस्यात्मक शिक्षण/मस्तिष्क विपलव शिक्षण प्राविधि का अधिकाधिक प्रयोग किया जाना चाहिए ताकि भविष्य के जीवन में वे स्वयं के निर्णय लेने अपने पैरों पर स्वयं खड़े होने में सक्षम हो सकें|
    - व्यावहारिक जीवन में प्रायः यह देखा जाता है कि विद्यार्थी अपने प्रवेश फॉर्म/कॉम्पटीशन फार्म अपने माता पिता अभिभावक/साइबर कैफे से करवातें हैं जो उनको पंगु बनाता है|
    - अनेक बार साइबर कैफे वाला अनेक त्रुटियां कर देता है जिसका परिणाम विद्यार्थियों को भुगतना पड़ता है |अतः विद्यार्थियों के छोटे से छोटे कार्य विद्यालय तथा घर परिवार में बच्चों के माध्यम से अधिकाधिक करवाया जाना चाहिए|
    - विशेषकर प्रायःदेखा जाता है कि कॉन्वेंट स्कूल में विद्यार्थियों के प्रोजेक्ट वर्क माता पिता/ अभिभावक करते हैं और विद्यार्थी उन्हें विद्यालय में प्रस्तुत कर वाह वाही लूटते हैं|

- किंतु यह विद्यार्थी के सर्वांगीण विकास के लिये अत्यंत घातक सिद्ध होता है और हमेशा दूसरों पर निर्भर रहने कि प्रवृत्ति बन जाती है और वह कभी भी परिपक्व नहीं हो पाता जिम्मेदारियां पड़ने पर 10 वर्ष का बालक परिपक्व हो जाता है और इनके अभाव में 40 वर्ष का व्यक्ति अपरिपक्व रहता है|
- व्यक्ति निर्माण की प्रक्रिया गर्भावस्था से ही प्रारंभ हो जाती है उस अवस्था में माता के आचरण अध्ययन अध्यापन क्रिया कलापों का गर्भस्थ शिशु के अवचेतन मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है, अभिमन्यु का गर्भावस्था में चक्रव्यूह का भेदना सीख जाना सर्वविदित है|
- हमारे इसी भारतीय संस्कृति में गर्भाधान को व्यक्ति में 16 संस्कारों में प्रथम संस्कार माना जाता है|
- जिसे वर्तमान पश्चात् संस्कृति की आँधी ने उसके महत्त्व को धूमिल कर दिया है| अतः विशेषकर बालिका शिक्षा/गृहविज्ञान पाठ्यक्रम गर्भिणी का आचार विचार एवं उसका महत्त्व सम्मिलित किया जाना चाहिए ताकि संस्कारवान संतति का जन्म हो सके|
- विद्यार्थियों को जैसे बनाना है उसके सम्मुख वैसा ही वातावरण उपस्थित किया जाना चाहिए जैसे यदि किसी को सेना में जाना है तो कक्ष में सेना से संबंधित पोस्टर खिलौने तथा उसी प्रकार की गतिविधियों को बचपन से अभ्यास करवाया जाना चाहिए|
- तो वहीं भावी गणितज्ञ के कक्ष में गणित/संख्या से संबंधित चार्ट खेल इत्यादि होने चाहिए|
- सभी शिक्षकों को भी विषय विशेष को अत्यंत रुचिकर ढंग से उसे प्रस्तुत करना चाहिये ताकि विद्यार्थी उस विषय से प्रेम कर सके और जब व्यक्ति विषय से प्रेम करने लगता है तो वह स्वत: उनसे प्यार हो जाता है तो उसे अतिरिक्त प्रयास नहीं करना पड़ता|
- माता-पिता एवं अभिभावकों द्वारा विद्यार्थियों के सम्मुख रीयलिस्टिक गोल प्रस्तुत किये जाने चाहिये तथा स्वयं के आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किए जाने चाहिए|
- आज के आधुनिक समय में टी० बी०, मोबाइल/इंटरनेट के युग में हमें बच्चों/विद्यार्थियों को वही देखने देना है जैसा हम उन्हें बनाना चाहते हैं अन्यथा वह कचरे/फुहड़ता से प्रेम करने लगेगा|
- आज कल जन्म होते ही शिशुओं के रोने पर निर्थक/भांड वीडियो कार्टून चलाकर उसे पकड़ दिए जाते हैं ऐसे बच्चों का मन कभी अच्छी चीजों में लग ही नहीं सकता बच्चों का मन कोरी स्लेट के समान होता है घर परिवार एवं विद्यालय द्वारा उस कोरी स्लेट पर आदर्श/संस्कार प्रद श्रेष्ठ ही लिखना होगा|
- बच्चे यदि बिगड़ता है तो उसमें उसका नहीं वरन माता-पिता घर परिवार विद्यालय का दोष होता है|आवश्यकता है कि कुकुरमुत्ते की तरह शिक्षा की मात्र डिग्री देने वाली दुकानों को बंद कर नए सिरे से नालंदा,तक्षशिला जैसे कड़े मानदंडओ के साथ-साथ शिक्षा प्रदान करने वालों मंदिरों का ही स्थान हो|
- आज की शिक्षा उथली/सतही होकर रह गई है अधिकांश शिक्षक अपने घिसे-पिटे नोट्स से विद्यार्थियों को केवल लिखवाते/डिक्टेशन जो मात्र हैं।
- किसी विद्यार्थी के कुछ पूछने पर गुस्सा/क्रोधित हो जाते हैं, फिर प्रैक्टिकल/आंतरिक अंक के भय के कारण विद्यार्थी धीरे-धीरे पूछना ही छोड़ देते हैं।
- शिक्षक बताएं भी कैसे जब वह खुद जोड़-तोड़ कर जुगाड़ करके शिक्षक बना है अर्थात योग्यता है नहीं और शिक्षक बन गयें।

- जब घड़ा स्वयं ही नहीं भरा है तो वह दूसरों को पानी कैसे पिलाएगा अतः आवश्यकता है शिक्षा पद्धति में आमूलचूल परिवर्तन लाने, शिक्षक चयन के कठोर मानदंड होने चाहिए।
- योग्य शिक्षकों का चयन होना चाहिये ताकि वह विद्यार्थियों की जिज्ञासाओं का समाधान कर सके उन्हें समझा सके केवल बोलती किताबें मात्र बन कर न रह जाए।
- इसके लिए आवश्यक है कि शिक्षक समय-समय पर स्वअध्याय करते रहें स्वाध्याय से नई-नई चीजों को सीखें एवं सीखे हुए ज्ञान पर सतत चिंतन मनन करे स्वयं के आचरण में उतारें तभी वह विद्यार्थियों में प्रभाव डालने में सक्षम हो सकेंगे|

- हमें संसार से अच्छाइयों को ग्रहण करना है गुरु में भी जो गुण/अच्छाई हैं उसे ही ग्रहण करना है; जैसे अष्टावक्र जी उनका शरीर आठ जगहों से टेढ़ा-मेढ़ा था।
- किंतु वह अत्यंत ही विद्वान थे उनके शरीर शौष्ठव को नहीं देखना है उनकी विद्वता को ग्रहण करना है, क्योंकि हर व्यक्ति हर क्षेत्र में प्रवीण हो ही यह कोई आवश्यक नहीं है| अन्य क्षेत्रों के लिए वह जिस ओर संकेत करें वहाँ जाना है।
- क्योंकि उसे मालूम है, कि दूसरा गुण कहाँ से सर्वश्रेष्ठ ग्रहण किया जा सकता है; गुरु का आज्ञापालन/निर्देश का पालन बिना संशय के करना चाहिए।
- क्योंकि विद्यार्थी अभी इतना नहीं सोच /विचार/चिंतन कर सकता है कि उससे ऐसा क्यों कराया जा रहा है, उस समय तो उसे बुरा लग सकता है किंतु बड़े होकर उसे इस बात का भान/समझ आती है कि उसे ऐसा क्यों कराया जा रहा है।
- जैसे चिकित्सक द्वारा दी गई दवाई कड़वी होने पर भी रोगी के लिए हितकर होती है उसी प्रकार गुरु/शिक्षक की बात कड़वी लगने पर भी वह विद्यार्थी के लिए आगे चल कर हितकर सिद्ध होती है।
- अतः आवश्यकता है कि शिक्षक अपने क्षेत्र में पात्रता विकसित करें तथा विद्यार्थी ऐसे गुरुओं की शिक्षाओं पर अमल करें तभी विद्यार्थी ; इसी में विद्यार्थी का सच्चा कल्याण सन्निहित है।
- आज कल परिवार टूट रहे हैं भाई-भाई के खून के प्यासे हैं आए दिन सम्पत्ति के विवाद में बेटा माता-पिता का कत्ल करने से नहीं चूक रहा है उसके पीछे का कारण यह है एक तो पाश्चात्य संस्कृति/ इंटरनेट/टी० बी०/सोशल मीडिया का बढ़ता प्रभाव संयुक्त परिवार के दूसरे संयुक्त परिवार के स्थान पर एकल परिवार का बढ़ता चलन तीसरे मूल्य एवं संस्कृति पर परख गुरुकुल के स्थान पर मैकाले की शिक्षा प्रणाली पर आधारित आधुनिक विद्यालय इत्यादि बालक शुरू से ही अपने चारों ओर छल कपट स्वार्थ से परिपूर्ण विषाक्त वातावरण देखता है और वैसा ही बन जाता है।
- संस्कार देने वाली संस्थान इनी-गिनी ही रह गई है और जब तक परिवार शिक्षा के मंदिरों में प्रेम/निष्काम/सच्चाई/मधुरता का बोलबाला नहीं होगा। तब तक शांति की स्थापना नहीं हो सकती यही प्रेम के भाव परिवार से ऊपर उठकर वसुधैव कुटंबकम तक विस्तृत होते हैं अतः आवश्यकता है कि परिवार तथा शिक्षण संस्थानों में इन मूल्यों के विकास को सर्वाधिक प्राथमिकता प्रदान की जाए।
- खेल में भी प्रतिस्पर्धा के स्थान पर प्रेम खेल भावना प्रधान हो तभी सही अर्थों में लोककल्याणकारी आदर्श समाज की स्थापना होगी।
- पुस्तकों को हम बोझ समझकर पढ़ते हैं जबकि कॉमिक्स विद्यार्थी बड़े चाव से पढ़ता है।

- वह एक दिन में कई-कई बार पढ़ कर समाप्त कर देता है ऐसा इसलिए है क्योंकि वह रोचक/चित्रात्मक/आकर्षक है।
- पाठ्यक्रम की पुस्तकों को हमें ऐसे रोचक बनाने की आवश्यकता है ताकि उनसे रुचि उत्पन्न हो सके विद्यार्थी को भी चाहिए।
- पाठ्यक्रम में पुस्तकों को बिना कोई मस्तिष्क में बोझ लिए सहज भाव से किस्से कहानी की तरह पढ़ना चाहिए अच्छा होगा कि उसे रात्रि में पढ़ें और सो जाएं जो कुछ हमने पढ़ा है।
- वह रात्रि भर अवचेतन मस्तिष्क में चलता रहता है और वह स्थायी हो जाता है अत: शिक्षण संस्थानों में विद्यार्थियों द्वारा पाठ्य-पुस्तकों को सहज रूप से पढ़ने एवं सहज भावाभिव्यक्ति का अभ्यास कराया जाना चाहिए।

6.3 शैक्षिक उपादेयता

किसी भी शैक्षिक शोध में उपादेयता अत्यन्त आवश्यक है। प्रस्तुत शोध का शीर्षक आचार्य प्रशांत का शैक्षिक योगदान है, जिसके अंतर्गत आचार्य प्रशांत जी के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का अध्ययन किया गया है जिससे विद्यार्थी एवं जन सामान्य प्रेरणा प्राप्त कर अपना जीवन सुधार सकते हैं|

6.3.1 विद्यार्थियों के लिए

प्रस्तुत शोध कार्य विद्यार्थियों के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। प्रस्तुत शोध के निष्कर्षों एवं सुझावों के आधार पर विद्यार्थी प्रेरणा प्राप्त कर अपने जीवन को एक नई दिशा दे सकेंगे एवं शिक्षा के सही अर्थ को जानकार शैक्षिक जीवन में एक नूतन परिवर्तन कर सकेंगे। वे शिक्षा को केवल नौकरी का साधन न मानकर शिक्षा के सम्यक अर्थ को अपने जीवन में उतारकर इन्द्रियों व मन को नियन्त्रित कर संयमित जीवन जीना सीख सकेंगे और अपने जीवन के स्वर्ण युग को संस्कारित कर उसका उपयोग ज्ञानार्जन में कर सकेंगे।

6.3.2 शिक्षकों के लिए

आचार्य जी के शैक्षिक विचारों की अवधारणा से प्रभावित होकर शिक्षक अपने शैक्षिक कार्य के वास्तविक उद्देश्य को जान सकेंगे और एक आदर्श शिक्षक के रूप में स्वयं को प्रतिस्थापित करने में सफल हो सकेंगे। वे आधुनिकता व दिखावे से दूर अपने आन्तरिक एवं बाह्य जगत का परिष्कार करके अनुशासित व आदर्श शिक्षक के गुणों को अपने व्यावहारिक जीवन में ढाल सकेंगे तथा शिक्षा को केवल धनार्जन का साधन न मानकर ज्ञान दान की एक पवित्र प्रक्रिया बनाकर शिक्षा के क्षेत्र में एक नया बिगुल बजा सकेंगे और शिक्षा के गिरते स्तर को ऊँचा उठा सकेंगे।

6.3.3 अभिभावकों के लिए

भौतिक संसाधनों के इस युग में अभिभावक बच्चों को पढ़ाते ही इसलिए हैं कि वह केवल धन कमाने की दौड़ में लग जाये। आज अभिभावकों ने शिक्षा को धनार्जन के आधार तक सीमित रखा है, किन्तु आचार्य जी के शैक्षिक विचारों से प्रेरित होकर अभिभावक शिक्षा को संस्कारों से समन्वित करते हुए रिश्तों के प्रति संवेदनशून्य होते बालकों को मानवता की शिक्षा के लिए प्रेरित कर देश को एक श्रेष्ठ नागरिक प्रदान कर सकेंगे।

6.3.4 जन सामान्य के लिए

आचार्य जी के जीवन एवं विचारों से प्रेरणा प्राप्त कर जन सामान्य अपना जीवन आनन्दमय बना सकेंगे। वे तनावमुक्त होकर योगमय जीवन जीने के लिए अभिप्रेरित होंगे तथा धर्म, संस्कृति एवं राष्ट्रीय प्रेम से अनुप्राणित होकर अपने कर्तव्य पथ पर अग्रसर हो सकेंगे। उनमें सद्प्रवृत्तियों को अपनाने की प्रेरणा का संचार होगा और निश्चय ही समाज में व्याप्त बुराइयों के विरुद्ध डटकर खड़े होकर अच्छाई के वाहक बन सकेंगे।

6.4 भावी शोध हेतु सुझाव

शोधकर्ता द्वारा पूर्ण किए गए लघु शोध प्रबन्ध "आचार्य प्रशान्त का शैक्षिक योगदान" के दौरान बहुत सी नवीन गतिविधियाँ सीखने को मिलीं, जिन्हें शोधकर्ता आगामी शोधार्थियों हेतु सुझाव के रूप में प्रस्तुत करता है —

- आचार्य जी की कृतियों में निहित सांस्कृतिक मूल्यों पर भावी शोध अध्ययन किया जा सकता है|
- आचार्य जी के शैक्षिक योगदान का अन्य विद्वानों के शैक्षिक योगदान से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है|
- आचार्य जी की सामाजिक एवं अन्य शैक्षिक गतिविधियों पर भी भावी शोध किया जा सकता है|
- आचार्य जी के प्रमुख संगठन की विशिष्टताओं पर भी भावी शोध किया जा सकता है|
- आचार्य प्रशांत द्वारा लिखित पुस्तकों में निहित शैक्षिक मूल्यों पर भावी शोध किया जा सकता है|
- आचार्य प्रशांत के समान अन्य धार्मिक एवं आध्यात्मिक विभूतिओं के शैक्षिक योगदान पर भी भावी शोध किया जा सकता है|
- भावी शोध में आचार्य जी एवं अन्य शिक्षाविदों के शैक्षिक विचारों का तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है|

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची



संदर्भ ग्रंथ सूची

शुक्ल, राघवेन्द्र (2009) | *डॉ० (श्रीमती) एनीबेसेण्ट के शिक्षा दर्शन का वर्तमान भारतीय शैक्षिक परिदृश्य में प्रासंगिकता का अध्ययन* | पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद| http://hdl.handle.net/10603/239789

गुप्ता, डॉ०श्रीमती प्रभा | *चाणाक्य के जीवन-दर्शन के शैक्षिक निहितार्थ एवं उनका समकालीन सार्थक्य - एक समीक्षात्मक अध्ययन* | डी० लिट्० (शिक्षण) शोध-प्रबन्ध, डॉ० भीमराव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा| http://hdl.handle.net/10603/327964

कुमार, अजीत (2011) | *शंकराचार्य के दर्शन में निहित शैक्षिक मूल्यों एवं विचारों का वर्तमान शिक्षा के परिप्रेक्ष्य में प्रासंगिकता*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद| http://hdl.handle.net/10603/238094

वीरेन्द्र कुमार (2021) | *टैगोर एवं रसेल के शैक्षिक दर्शन की वर्तमान में प्रासंगिकता*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर| http://hdl.handle.net/10603/376056

रणजीत सिंह (1998) | *राजा राम मोहन राय एवं श्री अरविन्द के शैक्षिक दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन एवं वर्तमान शिक्षा मेंउनकी उपयोगिता*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, डॉ० राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद। http://hdl.handle.net/10603/250139

संजय (2005) *संत रविदास का शिक्षा दर्शन एवं वर्तमान परिपेक्ष्य में उनकी प्रासंगिकता का विश्लेषणात्मक। अध्ययन*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पूर्वाञ्चल विश्वविद्यालय।

http://hdl.handle.net/10603/179908

अंकुर कुमार| *गाँधी का शिक्षा दर्शन और शिक्षा का अधिकार अधिनियम एक तुलनात्मक एवं समीक्षात्मक अध्ययन*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, पटना विश्वविद्यालय| http://hdl.handle.net/10603/194005

वन्दना गोंड| *ज्योतिबा फुले और भीमराव अम्बेडकर के शिक्षा दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन* पी-एच.डी शोध-प्रबन्ध, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज| http://hdl.handle.net/10603/419173

चंद्रभूषण पाण्डेय (2002)| *स्वामी दयानन्द सरस्वती के शैक्षिक दर्शन का वर्तमान सन्दर्भ में समालोचनात अध्ययन*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, वीर बहादुर सिंह पूर्वाञ्चल विश्वविद्यालय, जौनपुर|

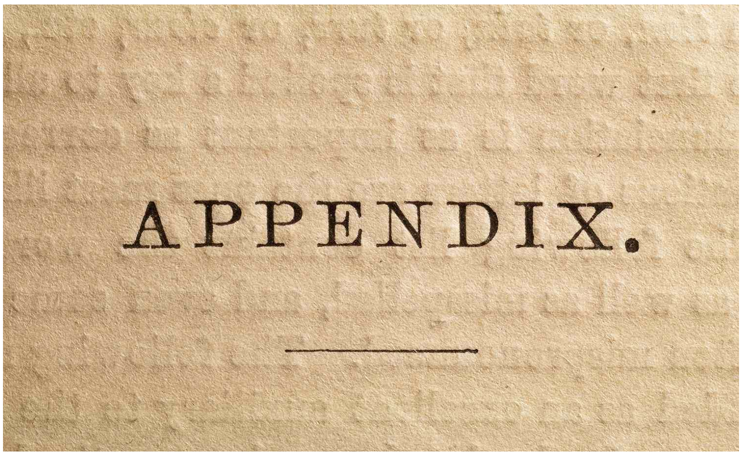
http://hdl.handle.net/10603/181689

अरुण कुमार तिवारी| *स्वामी विवेकानन्द एवं महात्मा गाँधी के शैक्षिक दर्शन का तुलनात्मक अध्ययन*| पी-एच.डी शोध- प्रबन्ध, डॉ. मनोहर लोहिया अवध विश्व विद्यालय, फैजाबाद|

http://hdl.handle.net/10603/228464

परिशिष्ट

- ❖ आचार्य प्रशांत से सम्बन्धित समाचार, विडियो इत्यादि के स्क्रीनशॉट
- ❖ जीवनवृत



आचार्य प्रशांत से सम्बन्धित समाचार, वीडियो इत्यादि के स्क्रीन शॉट



चुनौतियों के लिए खुद को रखें तैयार

समस्याओं से डटकर सामना करना सीखो। इन समस्याओं से जब तक भिड़ोगे नहीं, तब तक अपनी ताकत का एहसास भी नहीं कर पाओगे और न ही जीवन में आगे बढ़ पाओगे...



राष्ट्रीय सहारा

अध्यात्म | आचार्य प्रशांत

अध्यात्म में स्त्री भोग एवं संगत को 'सर्पिणी' की संज्ञा दी गई है पर मनोविज्ञान में फ्रॉयड ने कहा है कि लैंगिक इच्छाओं के दमन से मानसिक विकृतियां पैदा होती हैं। ध्यान से देखो तो यह दोनों बातें साथ-साथ चल रही हैं। अध्यात्म तुमको बताता है कि- 'जिसको तुम सोने का हार समझ रहे हो, वो वास्तव में एक सांप है।' फ्रॉयड कह रहे हैं कि-'बार-बार सांप को अनुमति दे दोगे कि वो अपने बिल में ही छुपा रहे, तो यह बात तुम्हारे लिए घातक होगी।' अध्यात्म तुमको वो दृष्टि दे रहा है, जिस से तुम सांप को 'सांप' की तरह देख पाओ। सांप कोई छुपा हुआ नहीं है-वो सामने है, पर दिखाई नहीं दे रहा। इसी का नाम माया है। वस्तु तो सामने है, पर तुम उसको समझ कुछ और रहे हो। वो सांप है सामने, पर तुम उसको सोने की हार माने बैठे हो। दिक्कत वस्तु के न दिखने में नहीं है, दिक्कत है देखने वाले के आंतरिक भ्रम में। हमारे जीवन का जितना जहर है, वो हमें उन्हीं सब जगहों से मिलता है जिनको हमने गले लगा रखा है। हममें विवेक नहीं है सत्य और असत्य को अलग-अलग देख पाने का। अध्यात्म हमें बताता है कि कौन है, जो असल में निकट लाने योग्य है। जो चीज करीब लाने लायक नहीं होती, उसको हम जीवन के बिल्कुल केंद्र पर बैठा देते हैं; और जो चीज वास्तव में मूल्यवान होती है, उसके प्रति हम शंका और दुराग्रह से ही भरे रह जाते हैं। माया अलग नहीं होती, वो अति साधारण होती है, इसीलिए हम फंस जाते हैं। अध्यात्म तुम्हें वो आंख दे देता है, जिसमें तुम छुपी हुई माया को भी पहचान लो। हर जगह है वो। चूंकि वो साधारण है, इसलिए हमारी नजर उस पर टिकती ही नहीं। मनोविज्ञान कहता है कि-'जब दिख जाए कि सांप है, तो उसका दमन भर मत करो। उसको बाहर ही भेज दो।' दमन की उपयोगिता बस इतनी है कि जिस वक्त तुम फिसलने जा रहे हो, उस वक्त बच जाओ। लेकिन अगर तुमने अपनी फिसलने की वृत्ति का मूल उपचार नहीं किया, तो कितनी बार तुम अपने आप को फिसलते-फिसलते बचा लोगे? दो बार, चार बार? तो दमन की बड़ी सीमा है। दमन भरोसे जीवन नहीं काट सकते, पूरा उपचार करना होगा। उसी पूरे उपचार का नाम 'अध्यात्म' है।







आचार्य प्रशांत जी का शैक्षिक योगदान



नैतिकता हमेशा सामाजिक होती है,

वो दूसरे को ध्यान में रखती हैं ।

नैतिकता कहेगी "सत्य बोलो" ,

अध्यात्म कहेगा "सत्य जानो"

ISBN 978-93-341-2507-8